सद्गुरु वन्दे विष्णु सत्यं शिवं सुन्दरम्

संग्रह त्याग न बिनु पहिचाने

(रामचरित मानस)

हृदय में रमण करने वाले राम
एवं सर्व जीवात्माओं के
लक्षण, गुण, कर्म, स्वभाव सहित
वर्णन करते हुए वन्दना
भाव प्रबोधिनी भाषा टीका सहित

टीकाकार महात्मा सत्यानन्द

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम्।।

विश्वाधार, शान्ताकार, जगन्निवास
देवेश, जिन की नाभि में
कमल है और आकाश के
सदृश मेघ वर्ण सुन्दर
वदन है। लक्ष्मी के पति,
कमल-नेत्र, सर्व लोकों के
ईश्वर, भवभय हारी,
योगियों के ध्यान
में आने वाले
भगवान विष्णु
की मैं वंदना
करता
हूँ।

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
आरती	4
नम्र निवेदन	5
दो शब्द	7
सम्पादकीय समीक्षा	11
समीक्षा	20
सद्गुरु वन्दना	24
संत वन्दना	28
खल वन्दना	32
संत और असंतों की वन्दना	33
रामायण का विषय	40
मुनि वन्दना	47
शिव-पार्वती वन्दना	48
अवध निवासी और भक्तों की वन्दना	50
नाम वन्दना	53
तुलसी विनय	64

****

आरती

जय गुरुदेव दयानिधि दीनन हितकारी।
जय जय मोह विनाशक, भव बंधन हारी।। **जय देव.।।**

ब्रह्मा विष्णु सदाशिव गुरु मूरत धारी।
वेद पुरान बखानत, गुरु महिमा भारी।। **जय देव.।।**

जप तप तीरथ संयम दान विविध दीन्हें।
गुरु बिन ज्ञान न होवे, कोटि यतन कीन्हें।। **जय देव.।।**

माया मोह नदी जल जीव बहें सारे।
नाम जहाज बिठा कर, गुरु पल में तारे।। **जय देव.।।**

काम, क्रोध, मद, मत्सर चोर बड़े भारे।
ज्ञान खड़ग दे कर में, गुरु सब संहारे।। **जय देव.।।**

नाना पंथ जगत् में निज निज गुण गावें।
सबका सार बताकर गुरु मारग लावें।। **जय देव.।।**

गुरु चरणामृत निर्मल सब पातक हारी।
वचन सुनत तम नाशे, सब संशय टारी।। **जय देव.।।**

तन, मन, धन सब अर्पण गुरु चरनन कीजे।
ब्रह्मानन्द परमपद, मोक्ष गति लीजे।। **जय देव.।।**

चार वेद छः शास्त्र सब में दर्शाया।
शेष, महेश रटत हैं, पार नहीं पाया।। **जय देव.।।**

पाँच चोर के मारन कारन नाम का बाण दिया।
प्रेम भक्ति से साधा भव जल पार किया।। **जय देव.।।**

सतयुग, त्रेता, द्वापर नाना रूप लिया।
कलिकाल भक्तन हित 'हंस' अवतार लिया।। **जय देव.।।**

श्री सद्गुरु देव की शरण में जो कोई नर आवे।
भव सागर से तर कर परम गति पावे।। **जय देव.।।**

* सद्गुरु वन्दे विष्णु सत्यं शिवं सुन्दरम् *

* नम्र निवेदन *

संत तुलसीदास जी द्वारा रचित ''मानस'' एक विचित्र शास्त्र है, यह शिव जी के हृदय का मानसरोवर है।

परमपिता-परमात्मा को जानना ही ज्ञान है, ज्ञान से जो विचारधारा निकलती है वह ज्ञान-गंगा है। शिव जी के हृदय रूपी मानसरोवर में हंस निवास करता है जहाँ ज्योति स्वरूप भगवान विष्णु का वास है जिनके-कमलवत् चरणों से दिव्य गंगा निकली हैं, जो गंगा-यमुना और सरस्वती नाम से प्रसिद्ध हैं। इन्हें अथवा इन के बहने के स्थान को प्राण, अपान और समान तथा इड़ा पिंगला और सुषुम्ना भी कहा गया है। इन गंगाओं में हंस नाम रूपी मणियों की ज्योति चमकती है जिसमें स्नान-ध्यान करने पर योगियों का मन पवित्र हो जाता है। यह दिव्य गंगा हृदय में उठने वाले विचारों की गंदगियों को धोकर उनको पवित्र करती है किन्तु बहुत-से विद्वान् डूब जाने के भय से उसमें गोता नहीं लगाते। मुक्त हो जाने के भय से भी वे ज्ञानामृत का पान नहीं करते क्योंकि उनको अपनी भौतिक देह और सांसारिक विषयों में बड़ी आसक्ति है। यद्यपि अपना मान अथवा यश बनाये रखने के लिए गंगा की महिमा अवश्य गा लेते हैं।

न तो मैं विद्वान हूँ और न मेरी कोई योग्यता ही है। संसार से मुक्त होने के पश्चात् परमपिता-प्रभु के चरणों में समर्पण हो चुका हूँ। न मेरे अन्दर प्रेम है न भक्ति-क्योंकि सेवा करने में अक्षम तथा उनका गुणगान करने में भी असमर्थ हूँ। अतः मैं बुद्धि के अन्तिम छोर पर हूँ। मैं अपनी बड़ाई विशद रूप में करता रहा हूँ जिससे लोग मेरी कमजोरियों को न पकड़ सकें और उनका असर मन पर न पड़े। अतः

यह निर्णय किया कि मुझे प्रभु के उन गुणों का अध्ययन अवश्य करना चाहिए जिन्हें संतों ने गाया है।

यह निर्णय भी मेरा अपना नहीं है बल्कि परम पूज्य सद्गुरुदेव एवं जगत् जननी श्री माता जी की असीम कृपा का फल है जो समय-समय पर प्रेरणा देते हैं कि मैं अध्ययन करूँ। किन्तु यह भी मेरे जैसों के लिए बड़ा कठिन है क्योंकि जो सदा सोचता रहता है वह और कर भी क्या सकता है? फिर अध्ययन करूँ तो कैसे करूँ? बराबर सोचते रहने की यह बहुत पुरानी आदत है यदि कुछ पढ़ता भी हूँ तो मेरा मन विचारों में खो जाता है। अन्ततोगत्वा मेरे अध्ययन करने का एक ही तरीका है कि मैं शास्त्रों में निहित भावों को प्रकट करने के लिए उनकी टीका तैयार करूँ। यह मुझे उनको बार-बार पढ़ने तथा उनके अन्दर छिपे गूढ़ अर्थो को समझने का मौका देता है।

श्रीमद्भगवत् गीता पर भाव प्रबोधिनी टीका तैयार करने पर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई तथा रामायण की भाव प्रबोधिनी टीका लिखने में बहुत आनन्द का अनुभव हुआ। मैंने यह टीका अपने स्वयं के अध्ययन तथा हार्दिक आनन्द के लिए लिखी है।

जब एक नया विद्यार्थी स्कूल में जो कुछ सीखता है पढ़ता और लिखता है, उसे अपने माता-पिता को तथा बड़े भाइयों-बहनों को दिखाता है, चाहे उसकी लिखावट कितनी भद्दी क्यों न हो तो भी परिवार के सभी शुभचिन्तक उसे बड़े प्रेम से पढ़ते हैं। बड़े प्यार से उसकी गलतियों को सुधारने के लिए उसे समझाते हैं उसी प्रकार मैं अपने सभी शुभचिन्तक माता-पिता एवं भाई-बहनों से प्रार्थना करता हूँ कि इस छोटी-सी लेखनी को बड़े प्रेम और प्यार से पढ़ने की कृपा करें। सबका प्रेम पाकर मैं अपने को कृतार्थ समझूँगा।

इस प्रकार विनम्रता के साथ यह समर्पित है।

* श्री सद्गुरुचरणकमलेभ्यो नमः *

* दो शब्द *

रामायण में संत तुलसीदास जी राम के रूप व गुणों का वर्णन करते हुए बताते हैं कि जिसमें योगियों का मन लीन होता है जो सब के हृदय में रमण करता है वह राम-नाम है जो नाम मन, बुद्धि और इन्द्रियों से परे है।

राम सरुप तुम्हार बचन अगोचर बुद्धि पर।
अविगत अकथ अपार, नेति नेति नित निगम कह।।

राम के स्वरूप को ही तुलसीदास जी ने नाम कहा है। वह नाम तीनों गुणों से न्यारा एवं तीनों गुणों का स्वामी है, जो हंस स्वरूप शिव जी के हृदय रूपी मानसरोवर में निवास करता है वह हंस विष्णु, शिव का पिता एवं आदिशक्ति का पति है। एक हंस के ही ये तीनों रूप हैं जो तीनों गुणों में वर्तते हैं। आदिशक्ति भवानी जो जगत् माता के नाम से प्रसिद्ध है जो प्राण देकर सबको उत्पन्न करती है, विष्णु जो सबके हृदय में रहकर प्राण ग्रहण करता है और शिव जो विष्णु से प्राण लेकर शक्ति को देता है ये हंस के ही तीनों गुण हैं। उपनिषद् आदि सद्ग्रन्थों में भी हंस को ही तीनों गुणों का स्वामी बताया है। उसी ने सृष्टि को उत्पन्न करने के लिए स्वयंभू और सतरूपा को प्रकट किया फिर उन्हीं की प्रार्थना पर स्वयं शक्ति सहित प्रकट हो कर यह वरदान दिया कि मैं देह धारण कर अपने अंश से विष्णु और शिव को जन्म दूँगा किन्तु मेरी आदिशक्ति भी देह धारण करेगी जिस से यह सारा विश्व उत्पन्न होता है।

वास्तव में आदि ब्रह्मा-स्वयंभू मनु, विष्णु और शिव ये तीनों हंस के ही रूप हैं, हंस इन तीनों का स्वरूप है, इन तीनों में रमण करता है जिसमें योगियों का मन लीन होता है, उसे ही नाम कहा है, वह नाम सभी में रमा हुआ होने से राम कहा जाता है।

संतजन रूप और स्वरूप का वर्णन करते हुए भी उनमें भेद-भाव नहीं समझते। इसी मर्म को न समझ कर एक वेद के चार वेद बने और उन वेदों की शंकाओं को दूर करने के लिए छः शास्त्रों का अथवा उस मर्म को जानने के लिए एक सौ आठ उपनिषदों का निर्माण हुआ। महान् ऋृषियों ने अनेक पुराण लिखे जिनमें सृष्टि सहित प्रभु का वर्णन है, भाँति-भाँति से समझाने का प्रयत्न करते समय सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और लीन हो जाने का भी वर्णन किया परन्तु अन्त में सभी ने यह कहा कि सद्गुरु के बिना ज्ञान नहीं होता और वह सद्गुरु परमेश्वर स्वरूप विष्णु एवं शिव ही है दूसरा नहीं, बाकी जो परमेश्वर का ज्ञान कराने वाले हैं उन्हें ऋृषि, मुनि, संत या भक्त शिरोमणि कहा है क्योंकि गुरु का अर्थ प्रकाश है वह परम ज्योति संसाररूपी अन्धकार से अत्यन्त परे हैं जो सर्व व्यापक भी है और ज्ञानदाता सद्गुरु भी है।

विज्ञान सहित ज्ञान प्राप्त किये बिना इन सभी धर्मग्रन्थों के पढ़ने व सुनने से संशय उत्पन्न होता है जिससे जिज्ञासु को जानने की इच्छा होती है और बुद्धिहीन मोहित होकर संशयों के कारण आलोचनाओं में लगा रहता है। कुछ भक्ति-भाव वाले अज्ञानी सज्जन पुरुष समझने में अपने को अथवा समझाने में साधु-ब्राह्मणों को असमर्थ जानकर केवल मान लेना ही अपना धर्म समझने लगे जिससे वे स्वार्थी धोखेबाज साधु-सन्त एवं पुजारी कहलाने वालों की बातें मान कर ज्ञान से घृणा करने लगे और वेद विपरीत कर्मो को करना ही अपना धर्म मान बैठे। परिणाम स्वरूप संसार में अनेकों मत फैल गये और वे अनेकों मत ही धर्म नाम से कहे जाने लगे। जिन्हें रामायण में दम्भी, लोभी पाखण्डी और कपटी कहा है।

कलिमल ग्रसे धर्म सब, लुप्त भये सद्ग्रन्थ।
दम्भिन निजमति कल्पकरि, प्रगट कीन्ह बहुपंथ।। (तुलसी)

लोभी दम्भी गुरु बहुत, मठधारी शठ जान।
गद्दी के रद्दी सभी, तिनमें सार न मान।। (कबीर)

उपरोक्त सभी समस्याओं को दूर करने के लिए तथा परमेश्वर के ज्ञान के गूढ़ तत्त्व को सरलता से समझने और समझाने के लिए संत तुलसीदास जी ने सभी धर्म ग्रन्थों का सार बड़ी सुन्दर सरल भाषा में गत महापुरुषों, महान् ऋृषियों एवं भक्त शिरोमणियों के संशयों को दूर करने की जो अनेक गाथायें हैं उन सबका वर्णन इस राम चरित मानस में भली प्रकार से किया है जिसके पढ़ने और सुनने से भक्तों के मन के मैल धुल जाते हैं।

यह मानस प्रथम शिव जी के मुख से उत्पन्न हुआ है, यह सभी शंकाओं को नष्ट करके भगवत् प्रेम को देने वाला है, यह भक्तों के ही नहीं बड़े-बड़े ऋृषि-मुनियों के मन के मैल को धोने वाला मानसरोवर है जो इसमें स्नान करता है उसका हृदय पवित्र हो जाता है। यह पवित्र शास्त्र भक्तों के लिए ज्ञान-अमृत, भूखों के लिए दुग्धामृत और रोगियों के लिए महान् औषधि है। यह लालचियों के लिए धन, क्रोधियों के लिए क्षमा तथा शत्रुओं के लिए दया है, कहाँ तक लिखूँ यह सभी के जीवन के लिए प्राणों के समान है।

वास्तव में इसके बिना ज्ञानी भी मुर्दे के समान हैं। अतः सभी सज्जन और दुर्जन अपने हित के लिए इसे बड़े प्रेम से पढ़ें अथवा सुनें और बार-बार इसका अध्ययन करें। जो भक्तजन समझते हुए प्रतिदिन इसका पाठ करेंगे वे सभी संशयों से रहित हो कर अथवा प्रभु के अटल प्रेम को पाकर दुःखों के बंधनों से मुक्त होकर परमगति पायेंगे।

इस मानसरोवर में गोता लगाये बिना कितने ही भक्त शिरोमणि शंकाओं से सशंकित होकर भवसागर में डूब गये। शंकाओं में डूबे हुए

प्राणी जिस प्रकार भवसागर से पार हो सकते हैं या हुए हैं वह सब साधन इस मानसरोवर में भली प्रकार वर्णन है। शंकाओं का ऐसा समाधान दूसरे ग्रन्थों में नहीं पाया जाता, इसलिए यह अति महान् है।

ज्ञान में निपुण नारद जैसे महान् विज्ञानियों को भी जब संशय हो जाता है तो उनका ज्ञान भी अज्ञान में बदल जाता है तब ऐसे ज्ञानियों को भी तुलसीदास जैसे संत की शरण लेनी पड़ती है। जिस प्रकार भक्त-शिरोमणि गरुड़ को भी भुसुण्डि जैसे मुक्तात्मा की शरण लेनी पड़ी।

अतः अधिक लिखना नहीं चाहता क्योंकि अधिकता अति वर्जित है। अभिमानी उन भक्तों के लिए लिख रहा हूँ जो स्वयं संशयों में डूबे हुए हैं और अपने को परम भक्त समझकर सन्तों के सत्संग का निरादर करते हैं। वे ज्ञान के अभिमान में आकर सेवा, सत्संग और भगवत् भक्ति से वंचित रहते हैं ऐसे अभिमानी भक्त भगवान के दर्शनों की इच्छा भी नहीं करते जिसके लिए सतयुग, त्रेता और द्वापर के भक्त तथा योगीजन वर्षो तक ध्यान-सुमिरण आदि शुभ कर्म करते थे फिर भी उन्हें प्रभु के दर्शन दुर्लभ थे। दर्शन इस युग में भी सुलभ हैं इसीलिए इस युग की महिमा सभी सन्तों ने गायी है। अतः सज्जन भगवत् भक्त मुझे क्षमा करेंगे, मेरी लेखनी के दोषों का विचार न करके भाव को ही ग्रहण करने की कृपा करेंगे।

तेहितें कछु गुण दोष बखाने। संग्रह त्याग न बिनु पहिचाने।।

ज्ञान होने पर भी पहचानने के लिए गुण, कर्म व स्वभाव का जानना आवश्यक है।

* सद्गुरुदेव के कमलवत् चरणों में साष्टांग दण्डवत् प्रणाम! *

* सम्पादकीय-समीक्षा *

रामायण में संत तुलसीदास जी उस पावन नाम का वर्णन करते हैं जो राम सब में रमा है। जो मंगलों का घर और अमंगलों को नष्ट करने वाला है जिसे पार्वती सहित शिव जी सदा जपते हैं जो शिव जी के हृदयरूपी मानसरोवर में रहने वाला हंस है। वह हंस नाम सभी के हृदय में रमण करता है, सारे जगत् को पावन करने वाला सभी वेद शास्त्रों का सार है। संत तुलसीदास जी के कथनानुसार यह राम चरित मानस हंस की गाथा है इसमें नाम के गुणों का वर्णन करते हुए प्रभु की सभी लीलाओं का वर्णन किया है उसी नाम को अनेक नामों से पुकारा जाता है, क्योंकि वह नाम निर्वचनीय है, वह मुँह से बोला नहीं जाता। उसी नाम को हिन्दी में स्वयंभू-शिव, विष्णु, राम, कृष्ण, शब्द ब्रह्म, पावन नाम व गुरमुखी में वाहेगुरु, सत्नाम, सार शब्द, विष्णु, शिव-पार्वती आदि तथा उर्दू में खुदा, अल्लाह, रहीम, आदम, गैबी आवाज तथा रब आदि एवं इंग्लिश में गॉड, लार्ड, होली नेम, डिवाइन वर्ड, क्राइस्ट, जिहोवा इत्यादि।

अनेक मतानुयायी उस नाम को अपनी-अपनी भाषा में पुकारते हैं किन्तु सभी के धर्मग्रन्थ में बताया है कि वह नाम मुँह से बोला नहीं जाता है, वह परम गुप्त है केवल जानने का विषय है कहने का नहीं। जो जन जानकर उसका साधन करते हैं या उसे याद करते हैं उनके सभी संकट मिट जाते हैं।

मन मन्दर तन भेष कलंदर घट ही तीरथ नावां।
एक शब्द मेरे प्राण बसै, बहुरि जन्म नहिं आवां।। (नानक)

विधि हरि हर जाको ध्यान धरत हैं, मुनिजन सहस अठासी।
सोई हंस तेरे घट भीतर, अलख पुरुष अविनाशी।। (कबीर)

पायो जी मैंने नाम रतन धन पायो।
वस्तु अमोलक दी मेरे सतगुरु करि कृपा अपनायो। (मीरा)

हंसा सोऽहं तार कर सुरति मकरिया पोय।
उतरि-उतरि फिरि-फिरि चढ़े सहजे ही सुमिरन होय।।(सहजो)

चाँद बादल में छिपा था मुझे मालूम न था।
मेरे दिल ही में खुदा था मुझे मालूम न था।
एक नुक्ते में जुदा था मुझे मालूम न था।। (फकीर)

Nobody can pronounce Him by the carnal lips; with soul alone man can pronounce the Name.

(Aquarian Gospel of Jesus Christ 96 : 17)

The spirit of Eternity is One unmanifest; and this is God the Father, God the Mother. God the Son in One. In the life of manifests, the One became the three and God the Father is the God of might; and God the Mother is omniscient God and God the Son is Love. And God the Father is the power of Heaven and Earth; and God the Mother is the Holy Breath, the thought of Heaven and Earth; and God the Son, the only Son, is Christ, and Christ is Love

(Aquarian Gospel–163:31, 32, 33)

उस पावन नाम को कोई होठों से उच्चारण नहीं कर सकता, वह नाम केवल हृदय में ही जपा जाता है। यह क्राइस्ट ने कहा है सृष्टि से पहले परमेश्वर एक था और वह आत्म-स्वरूप से एक ही है। रचना के कारण वह एक ईश्वर तीन रूप में आ गया परमपिता परमेश्वर,

जगतमाता परमेश्वर, परमेश्वर-पुत्र। वह एक से तीन हो गया और वह तीनों रूप एक परमेश्वर के ही हैं उससे अलग नहीं। एक ही प्रभु ने शक्ति से माँ का रूप धारण किया जो प्राणों की दाता है और अपने गुण से पिता का रूप धारण किया जिसके बल से शक्ति प्राणों की दाता है अर्थात् वह प्राण शक्ति को देता है तब उन माता-पिता के प्यार से स्वयं देह धारण करता है जो परमेश्वर पुत्र कहा जाता है। वास्तव में प्रभु का प्यार ही क्राइस्ट है।

इसी प्रकार वेद, उपनिषद् अथवा गीता, रामायण आदि धर्मग्रंथों में वर्णन किया है।

रुचं ब्रह्म जन्यन्तो देवा अग्रे तद ब्रुवन्।
यस्त्वैवं ब्राह्मणोंविद्या तस्य देवा असन्वशे।।

(यजुर्वेद ३१ २१)

परमप्रभु परमपिता परमात्मा ने सृष्टि रचना हेतु ब्रह्मा जो प्रथम मनु स्वयंभू नाम से प्रसिद्ध है उत्पन्न करके, स्वयं प्रकट होकर उसे ज्ञान दिया। उस अध्यात्म विद्या के आधार से सभी देवों सहित ब्रह्मा उस प्रभु की उपासना करते हैं और सभी उसके वश में हैं।

एको हंसो भवनस्यास्य मध्ये स एवाग्नि सलिले सन्नि विष्टः।
तमेव विदित्वा अतिमृत्युमेति न अन्य पंथा विद्यते ऽयनाय।।
स विश्वकृद्विश्व विदात्मयोनिर्ज्ञ कालकारो गुण सर्व विद्यः।
प्रधानक्षेत्रज्ञ पतिर्गुणेशः संसार मोक्ष स्थितिबन्ध हेतु।।

(यजु. श्वे. अ. द्व. श्लोक १५ १६)

वह एक ही हंस जल में अग्नि की भाँति सारे विश्व में विद्यमान है, उपासक उसको ही जान कर मृत्युरूप संसार चक्र से मुक्त हो जाता है, इसके बिना मृत्यु से बचने का अथवा मुक्ति का संसार में दूसरा कोई

मार्ग नहीं है। वह हंस प्रकृति और जीवों का स्वामी है, सत, रज, तम इन तीनों गुणों का ईश्वर है। संसार में मोक्ष, स्थिति और बन्धन का कारण तथा विश्व का ज्ञाता स्वयंभू है। ज्ञान स्वरूप, ज्ञान दाता गुरु समय का उत्पन्न करने वाला सर्वगुणी और सर्वज्ञ है।

एको वशी सर्व भूतान्तरात्मा एकं रूपं बहुधा यः करोति।
मात्मस्थं येऽनुपश्यन्तिधीरास्तेषां सुख शाश्वत नेतरेषाम्।।

(कठोर्पानषद् ५ १२)

वह एक ही परमेश्वर हंस सर्व भूतान्तरात्माओं को अपने वश करके एक रूप भी धारण करता है और बहुत रूप भी धारण करता है। जो बुद्धिमान भक्त अपनी आत्मा में परमेश्वर को देखते हैं, ध्यान से आराधते हैं उन्हीं को अविनाशी सुख मिलता है दूसरों को नहीं।

यदक्षरं वेद विदो वदन्ति विशन्ति यद्यतयो वीत रागाः।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदं संग्रहेण प्रवक्ष्ये।।

सर्वद्वाराणि संयभ्य मनो हृदि निरुध्यच।
मूर्ध्न्याधायात्मनः प्राणमास्थितो योग धारणाम्।।

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम्।।

(गीता अध्याय ८, श्लोक ११,१२,१३)

वेद के ज्ञाता जिसे शब्द-ब्रह्म कहते हैं और जिसमें ब्रह्मचारी और योगीजन प्रयत्न करके प्रवेश करते हैं उस परमपद को संक्षेप से कहूँगा। इंद्रियों को विषयों से रोककर, मन को हृदय में निरोधकर, प्राणों में स्थित होकर, योग धारणा में ॐ से परे एक अक्षररूप ब्रह्म को व्यवहारिक रूप में निश्चल मन से स्मरण करता हुआ जो शरीर को त्याग कर जाता है वह परम गति पाता है।

त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम्।।
त्वमव्ययः शाश्वत धर्म गोप्ता सनातनस्तवं पुरुषो मतोमे।।

वायुर्यमोऽग्नि वरुणः शशाङ्कः प्रजापतिस्त्वं प्रतितामहश्च।
नमो नमस्तेऽस्तु सहस्रकृत्वाः पुनश्च भूयोऽपि नमो नमस्ते।।

(गीत अ. ११, श्लोक १८,३९)

ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात् अर्जुन प्रार्थना करता है कि हे पुरुषोत्तम्! आप जानने योग्य परम अक्षर हो। जिस शब्द का कभी नाश नहीं होता और अनादि हो और विश्व के परम निधान, अविनाशी, सनातन पुरुष तथा धर्म के स्वरूप हो ऐसा मेरा मत है। आप वायु, यम, अग्नि, वरुण, चन्द्र, प्रजापति ब्रह्मा और उस ब्रह्मा के भी पिता हो। आप परमपिता अर्थात् ब्रह्मा को उत्पन्न करने वाले पिता के भी पिता हो आपको लाखों बार प्रणाम है।

इसी प्रकार सभी वेद-शास्त्रों में हंस प्रभु के गुण गाये हैं, वास्तव में यह जो भी कुछ संसार है यह प्रभु की ही माया का विस्तार है, सभी महापुरुष एवं परमदेव अथवा विष्णु, शिव, राम, कृष्ण आदि क्रमशः उसी के अवतार हैं। संत तुलसीदास जी ने इस रामायण में यह सब भेद वर्णन करते हुए हंस प्रभु का ही वर्णन किया है। बाइबिल में भी सेंट जॉन ने यही भेद वर्णन करते समय कहा है कि

In the beginning was the Word, the Word was with God and the Word was God.

(John I:I)

इस सृष्टि के प्रारम्भ में वह शब्द था और वह शब्द परमेश्वर के साथ था वास्तव में वह शब्द ही परमेश्वर था।

सृष्टि से पहले वह शब्द ईश्वर था परन्तु अब ईश्वर शब्द और शब्द ईश्वर है। अर्थात् प्रारम्भ में शब्द 'हंस' था वह 'हंस' गुण और

शक्ति सम्पन्न था इसीलिए उसे त्रिगुणस्वामी और सर्वशक्तिवान कहते हैं। रचनाकाल में वह एक ही हंस तीन रूप में आ गया विष्णु भवानी और शंकर। यही परमदेव-परमेश्वर माने और कहे जाते हैं, देहधारी राम विष्णु के अवतार तथा शिव-पार्वती भवानी शंकर के अंशरूप कहे जाते हैं।

सृष्टि के आदि और अन्त में ही ये तीनों एक साथ प्रकट होते हैं और आदिरूप धारण करते हैं परन्तु मध्यकाल में समय-समय पर शिव-पार्वती और विष्णु ये तीनों ही आते रहते हैं। शिव-पार्वती भव बन्धन से जीवों को मुक्त करने और उन्हें प्रभु का परम आनन्द देने के लिए ज्ञानदाता-सद्गुरु हैं। भेद-भाव के कारण जब-जब भक्तों पर संकट आते हैं, दुष्टजन प्रभु के भक्तों को सताते हैं तो उनके कष्टों को निवारण करने के लिए परम प्रभु विष्णु ही अवतार के रूप में अनकों रूप धारण कर आते रहते हैं। जिनकी महिमा सभी धर्मग्रन्थों में वर्णन की है परन्तु फिर भी उनकी लीलाओं का पार किसी ने नहीं पाया। शास्त्रों में इन्हें नित्य और निमित्त अवतार कहा है। श्री भोले शंकर, शिव नित्य कहे जाते हैं ये सब देवों में महान् देव (महादेव) भक्तों के हृदय के सम्राट् कहे जाते हैं। भगवान विष्णु के अनेक अवतार भक्तों के निमित्त होते हैं इसलिए उन्हें निमित्त अवतार कहा जाता है किन्तु वर्तमान काल में ये नित्य भी हैं, और निमित्त भी हैं, सद्गुरु भी हैं और भक्तों की रक्षा करने अथवा सत् का पालन करने के लिए इस भूमि पर आते हैं।

आदि शक्ति-भवानी भी प्रत्येक युग में अनेकों रूप धारण करती हैं जिनकी महिमा का धर्मग्रन्थों एवं पुराणों में वर्णन है।

"जासु अंश प्रगटहिं गुण खानी। अगनित उमा लक्ष्मी ब्रह्मानी।।"

प्रभु के इन तीनों रूपों की गाथा अथाह और अपार है, ये अनेक रूप धारण कर अनेकों नामों से पुकारे जाते हैं। इनके भौतिक नामों के चक्कर

में न पड़कर हृदय स्थित पावन नाम को जानकर इनकी सेवा-भक्ति का लाभ प्राप्त करना चाहिए। परमेश्वर के सभी नाम इन्हीं को सम्बोधन करते हैं। उदाहरणार्थ

GOD–

G–For Generator–"Energy" Who is giver of the soul called –Holy Mother of the universe.

O–For Operator–"Lord Vishnu" Who is the Saviour Spiritual Master and Lord of the universeae universe.

D–For Destroyer–"Power, Lord Shiva" Who is the giver of the bliss and Lord of the soul.

जिस प्रकार वेद-शास्त्रों में शिव को संहारकारी, विष्णु को पालन करने वाला और आदिशक्ति को प्राणदाता माता कहा है ये सब एक प्रभु जिसे अंग्रेजी में गॉड कहकर वर्णन किया है। क्राइस्ट का अर्थ भी ज्योतिवत्-पुरुष, दिव्य पुरुष जिसे गीता में पुरुषोत्तम कहा है।

खुद जो खुद है अर्थात् स्वयं है और स्वयं ही उत्पन्न होता है, इसीलिए उसे स्वयंभू कहते हैं।

आदम-अहोवा ''शिव और शक्ति'' को कहा है। प्राण को उर्दू में दम कहते हैं। जब दम बाहर आता है तो सृष्टि रूप देह का संहार हो जाता है और जब दम प्राप्त होता है तो जीवन मिलता है अतः इन दोनों प्राण लेने और देने वाले शिव-शक्ति को ही बाबा आदम और अहोवा कहा है।

सतनाम गुरु नानकदेव ने जो नाम सबके हृदय में है, जो हंस हृदयरूपी मानसरोवर में विराजमान है उसे ही सतनाम अर्थात् सच्चा नाम कहा है। सिन्धी उसे सच्चोनालो कहते हैं। 'सच्चोनालो मुहिंजो गलेजो हार।

वाहेगुरु वह नाम ही सच्चा सद्गुरु है उसके तीन रूप माने गये हैं। ग्रन्थ साहब के पाठ में आता है कि गुरु विष्णु, गुरु पार्वती, गुरु शिव महेश्वरः, यह मैंने कैलाश के कल्पा नामक नगरी में एक गुरुद्वारे में पाठ करते सुना था। जिसे सार शब्द भी कहा है।

प्रायः पाँच सौ वर्ष पूर्व गोस्वामी अच्युतानन्द ने ताड़-पत्र पर लिखे गये हजार पृष्ठों के मालिका नामक ग्रन्थ में जो उड़ीसा के एक मन्दिर में उपलब्ध है, लिखा है। जिसका संक्षिप्त वर्णन भविष्य अर्थात् वर्तमान के लिए इस प्रकार है

हंस रूप कु से धरि हंस नाम मंत्र विख्यात करिलो याइफूल। देश विदेशी विहारी ।।५४ भविष्यत् मालिका।।

महादेव ये आसिबे ताण्डव नृत्य रे मग्न होइवे लो याइफूल। अंश दुर्गामाता थिबे ।।११२।।

ए खेल गुप्त हेव। भक्त बिना अन्य केहि न बुझिब लो याइफूल। ए वाणी अटल ध्रुव ।।११३।।

तबे देखिबु ''श्री हरि।'' लावन्य मूर्ति मुरलीधारी लो याइफूल। भव सिन्धु जिबूतरि ।।११५।।

भक्त के सुख वेल। वहि आसुअछि स्त्रोत प्रकार लो याइफूल। पाषांडक दुःख वेल ।।११६।।

चैतन्य महाप्रभु हंस देह धारण कर हंस नाम महामन्त्र को विख्यात करेंगे और देश-विदेश में विचरण करेंगे। महादेव जी भी आयेंगे और ताण्डव नृत्य में निमग्न रहेंगे। यह खेल गुप्त होगा, भक्तों के बिना दूसरा कोई नहीं समझेगा। आदिशक्ति-भवानी के अंशरूप श्री पार्वती जी भी महादेव जी के साथ होंगी (५४, ९६, ९७,११२)

अपने शिष्य जायफूल को सुनाते हुए गोस्वामी अच्युतानन्द जी कहते हैं कि है जायफूल! तू मेरी वाणी अटल ध्रुव-सत्य ही समझना, तू स्वयं श्री हरि की लीलाओं को देखेगा और तू अपने हृदय में भी ध्यान में श्री हरि की मधुर मनोहर मूर्ति को देखेगा और तब तू भव सिन्धु से तर जायेगा। वह प्रभु भक्तों को अपार सुख देंगे और दुष्टों को अपार दुःख भी देंगे। (११३,११५,११६)

* समीक्षा *

प्रथम प्रभु की वन्दना में संत तुलसीदास जी भवानी-शंकर की वन्दना करते हुए लिखते हैं कि श्रद्धा विश्वास स्वरूप-भवानी-शंकर के बिना सिद्धजन भी अपने हृदय स्थिर ज्योति स्वरूप विष्णु को देख नहीं सकते। फिर नाम की वन्दना में भी भवानी और शंकर को नाम के दो अक्षर बताया है वे अक्षर भक्तों के हृदय के नेत्र हैं जिनके बिना हृदय में प्रभु को देख नहीं सकते। जैसा कि शास्त्रों में हंस नाम की व्याख्या करते हुए बताया है कि 'हं' शिव और 'स' शक्ति है अर्थात् शिव और शक्ति इन दोनों रूपों का स्वरूप एक 'हंस' ही है। (रामायण १,७४)

श्री सद्गुरुदेव की वन्दना करते हुए संत तुलसीदास जी ने लिखा है मैं सद्गुरुरूप शंकर जी की वंदना करता हूँ जो ज्ञानस्वरूप और नित्य सद्गुरुरूप हैं। फिर सद्गुरु-विष्णु की वंदना करते हैं, जो कृपा के समुद्र हैं जिनके वचन से महान् मोह एवं अज्ञान का अन्धकार इस प्रकार नष्ट हो जाता है जिस प्रकार सूर्य के प्रकट होने पर रात्रि का अन्धकार नष्ट हो जाता है।

यहाँ सद्गुरु के दो ही रूपों का वर्णन है परन्तु अन्य ग्रन्थों में गुरु के चार रूपों का वर्णन है। गुरु ब्रह्मा, गुरु विष्णु, गुरुदेव-महेश्वर और गुरु साक्षात्-परमब्रह्म। ब्रह्मा सृष्टि के आदि में होता है अतः उसका स्वयंभू के नाम से वर्णन किया गया है क्योंकि प्रथम प्रभु ही स्वयं प्रकट होकर रचना भी करते हैं और ज्ञान भी देते हैं और चौथा परमब्रह्म परमेश्वर हंस जो पहले स्वयंभू के रूप में प्रकट हुआ फिर वही मनु को वरदान देने के कारण, कलियुग का अन्त करने के लिए अब अपने अंशों सहित प्रकट हुआ। अतः नित्य सद्गुरु स्वरूप शिव ही संसार में आते रहते हैं।

शिव-पार्वती की वन्दना करते हुए तुलसीदास जी लिखते हैं कि मैं उन माता-पिता और सद्गुरु रूप भवानी तथा शिव जी की वंदना करता हूँ जो शिव जी मुझ दास के स्वामी हैं। संत तुलसीदास जी कहते हैं कि हंस नाम के बिना कोई भी सिद्ध योगी अथवा भक्त न तो अपने हृदय स्थित ज्ञान को जान सकते हैं अथवा पहिचान सकते हैं और न शिव-पार्वती की कृपा के बिना नाम के प्रभाव को ही जान पाते हैं। अतः श्री भोलेनाथ-शिव जी की भक्ति करनी चाहिए, तभी जीव भवसागर से पार हो सकता है। (६०)

वर्तमान इस युग के महापुरुष, भगवान शिव की उनके गुण स्वभाव सहित वन्दना करते हुए संत तुलसीदास जी कहते हैं कि

सरस्वती, शेष, शिव और ब्रह्मा तथा चारों वेद, छहों शास्त्र और सभी पुराण नेति-नेति कहकर सदा जिसके गुण गाते हैं। वह विश्वरूप सर्वव्यापक परमेश्वर इच्छाओं से रहित, भौतिक नाम व रूप से भी जो परे हैं केवल भक्तों की इच्छा से उनके हित के लिए देह धारण करता है। वह कृपालु भगवान अपनी शरण में आये भक्तों से प्रेम करता है जिसकी भक्तों पर बड़ी ममता है, दया करके भी क्रोध नहीं करता, सत्य का पालन करके सतयुग की स्थापना करता है। (५२,५३)

पावन नाम की वंदना में तुलसीदास जी लिखते हैं कि राम-नाम गुप्त है, जो कोई व्यक्ति उस नाम को अपने होठों से उच्चारण करेगा उसका जो प्रभु के प्रति प्रेम है वह समाप्त हो जायेगा। वह नाम समझने में सरल है और नाम नामी से मिलाने में सहज और साथी है, दोनों की आपस में प्रीति है। जो समझना चाहें वे साधना द्वारा ही समझ सकते हैं। कोई भी वस्तु बिना नाम के पहिचानी नहीं जाती। अतः पहले नाम को हृदय में सुमरोगे तो हृदय में प्रेम होने पर रूप भी दिखाई देगा। (७५,७७,७८)

चार सौ वर्ष पहले संत तुलसीदास जी ने इस रामायण में लिखा है कि ब्रह्म सर्वव्यापक और सभी के हृदय में विराजमान है किन्तु हंस माता और पिता के रूप में प्रकट होकर विष्णु और शिव को इस घोर कलिकाल में जन्म देगा जो नाम व्यापक ब्रह्म और शरीर धारी राम से भी बड़ा है क्योंकि वह ब्रह्म हृदय में रहने पर भी हंस नाम के बिना किसी के दुःख को दूर नहीं कर सकता।

वह नाम बीज रूप से सभी के प्राणों में रमा हुआ है। तीनों लोकों में, भूत-भविष्य और वर्तमान इन तीनों कालों में तथा चारों युगों में जीव नाम जपकर ही परम गति को प्राप्त हुए हैं परन्तु वही नाम कलियुग के महान् दोषों को नष्ट करने के लिए विकराल काल के समान है। कलियुग के भक्तों का मन विषयों की कामना रूपी समुद्र में गोता लगाकर डूबा हुआ है जिनके लिये नाम कल्पवृक्ष की भाँति प्रकट होकर भक्तों का उद्धार करेगा। वह हंस कलियुग में बड़ा दयालु और इच्छानुसार फलों का दाता तथा परलोक में हित करने वाला और इस लोक में माता और पिता है। (९३,९४,९५,)

कलियुग के प्रभाव से जीवों की मुक्ति के लिए विश्व के रचयिता स्वयंभू मनु ने प्रभु से वरदान माँगा कि हे परमपिता परमेश्वर मैं आपके उस हंस स्वरूप को अपने इन प्राकृतिक नेत्रों द्वारा देखना चाहता हूँ जिसके अंश से विष्णु, ब्रह्मा और शिव उत्पन्न होते हैं, जो हंस स्वरूप शिव जी के मनरूपी मानसरोवर में निवास करता है। तब विश्वव्यापी परमपिता परमेश्वर हंस ने प्रगट होकर मनु को वरदान दिया कि हे तात! मैं अपने अंश विष्णु और शिव सहित देह धारण कर भक्तों को सुख देने वाली लीला करूँगा परन्तु यह मेरी आदिशक्ति जिससे यह विश्व उत्पन्न हुआ है, शरीर धारण करेगी।

(शिव पार्वती सम्वाद-अवतार कथा)

कलियुग में नाम के प्रभाव का वर्णन करते हुए संत तुलसीदास जी कहते हैं कि कलियुग में बहुत-से साधु कालनेमि के समान छल-कपट में निधान होंगे

परन्तु उनके कपट को नष्ट करने के लिए उत्तम बुद्धि हनुमान की भाँति नाम ही समर्थ है। नरसिंह रूपी नाम हिरण्यकशिपु रूपी कलियुग को नष्ट करने के लिए प्रकट होगा और जापक जन प्रह्लाद जैसे होंगे जो दुष्टों का नाश करके भक्तजनों की रक्षा करेंगे। (९६)

परम सद्गुरु, भगवान विष्णु से भोलेनाथ शिव अलग नहीं हैं। जिस प्रकार वाणी का अर्थ जल और जल की लहर कहने में अलग है परन्तु वास्तव में अलग नहीं हैं। ये ज्ञान, ध्यान और प्रेम के सच्चे सद्गुरु हैं। इनके गुणों का वर्णन बुद्धिमान ज्ञानी को, परम भक्तों को सुख देने वाला तथा सर्व पापों को नष्ट करके कामधेनु, अमृत की गंगा तथा सुन्दर चिन्तामणि के समान फल देने वाला है। (१०७)

इनके गुणों का वर्णन ऐसा है जैसा कि नरक को, असुरों की सेना को नष्ट करने तथा भक्त समाज रूपी देवकुल का हित करने वाली पार्वती और सन्त समाज के लिए क्षीर समुद्र के समान लक्ष्मी। ये पार्वती और लक्ष्मी पाप, कामनाओं और क्रोध को नष्ट करने में हाथी और शेर के समान हैं। (१०८, १११)

ये अतिथि, अज्ञानरूपी अंधकार को नष्ट करने के लिए सूर्य और उसकी किरणों के समान तथा सेवा करने की इच्छावालों के लिए कल्पवृक्ष और कामधेनु के समान हैं। ये सम्पूर्ण पुण्यों के फल स्वरूप महान् भोगों के समान एवं सेवकों के मन रूपी मानसरोवर में रहने वाले हंस के समान हैं। (११२)

सद्गुरुदेव के गुणों की गाथा का अन्त नहीं है। जिनके शुद्ध विचार हैं वे सुनकर अथवा पढ़कर आश्चर्य नहीं मानेंगे और प्रभु के गुण गाकर अपना जीवन सफल बनायेंगे। (११५,११६)

।। सद्गुरुं वन्दं शिवोहरि।।

संग्रह त्याग न बिनु पहिचाने

गुण, कर्म स्वभाव सहित

सद्गुरु वन्दना

वर्णा नामर्थ संघानां रसानां छन्द सामपि।
मंगला नाम् च करतारौ वन्दे वाणि विनायकौ।।

भवानी शंकरौ वन्दे श्रद्धा विश्वास रुपिणौ।
याभ्यां बिना न पश्यन्तिसिद्धाः स्वान्तः स्थमीश्वरम्।।

अक्षरों, अर्थ समूहों, रसों, छन्दों एवं वाणी के स्वामी मंगला-पति की वन्दना करता हूँ। वह भवानी-शंकर श्रद्धा-विश्वास के स्वरूप हैं जिनके बिना सिद्धजन भी अपने हृदयस्थित परमेश्वर को नहीं देख सकते। मैं शब्द-ब्रह्म रूप भवानी-शंकर की वन्दना करता हूँ। (१)

वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शंकररुपिणम्।
यमाश्रितोहि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते।।

ब्रह्मानन्दं परम सुखदं केवलं ज्ञान मूर्तिम्।
भावातीतं त्रिगुण रहितम् सद्गुरुं तं नमामी।।

मैं भवानीपति शंकर की वन्दना करता हूँ जो ज्ञानमय, नित्य सद्गुरु स्वरूप हैं जिनकी शरण में आने पर अनिष्ट करने वाले टेढ़े चन्द्रमा की भी वन्दना की जाती है। जो ब्रह्मानन्द और परम सुख के दाता केवल ज्ञान ही की मूर्ति हैं तथा भावनाओं से भी परे त्रिगुणातीत हैं। उन तीनों गुणों के स्वामी सद्गुरु को मेरा बार-बार प्रणाम है। (२)

सीता राम गुणग्राम पुण्यारण्य विहारिणौ।
बन्दे विशुद्ध विज्ञानौ कविश्वर कपिश्वरौ।।

उद्भव स्थिति संहार कारिणी क्लेश हारिणीम्।
सर्व श्रेयस्करीं सीता नतोहं राम बल्लभाम्।।

श्री सीता-राम के गुणसमूह रूपी पवित्र वन विहार करने वाले भवानी-शंकर की मैं वन्दना करता हूँ। जहाँ शिव-पार्वती ज्ञानी-ऋृषि मुनियों के स्वामी हैं वहाँ श्री सीता-राम हनुमान आदि वानरों के स्वामी हैं। इन दोनों में श्रेष्ठ कर्म करने वाली तथा उत्पत्ति-पालन और संहार करने वाली लक्ष्मी स्वरूपा राम की प्रिया श्री सीता जी को प्रणाम करता हूँ (३)

यन्माया वशवर्ति विश्वमखिलं ब्रह्मादि देवासुरा।
यत्सत्वाद मृषैव भाति सकलं रज्जो यथाहे भ्रमः।।

यत्पाद प्लवमेकमेव हि भवाम्भो धेस्ति तीर्षावताम्।
वन्देऽहं तम शेष कारणपरं रामाख्यमीशं हरिम्।।

जिनकी माया के वशीभूत सम्पूर्ण विश्व, ब्रह्मादि सम्पूर्ण देव और असुर हैं। जिनकी सत्ता से यह सारा जगत् रस्सी में सर्प की भाँति सत्य जान पड़ता है, यद्यपि यह भ्रम है। जिनके चरण ही भवसागर से तरने की इच्छा वालों के लिए एकमात्र नौका या सहारा है। अन्धकार और कर्त्ता, कर्म तथा कारण से भी जो परे हैं उस राम कहलाने वाले भगवान विष्णु की मैं वन्दना करता हूँ। (४)

नाना पुराण निगमागम सम्मतं यद् रामायणे निगदितं क्वचिदन्य तोपि।।
स्वान्तः सुखाय 'तुलसी' रघुनाथ गाथा। भाषा निबंध मतिमंजुल मातनोति।।

अनेकों पुराणों, वेद-शास्त्रों तथा अन्य धर्मग्रन्थों के मतानुसार इस रामायण में मैं (तुलसीदास) अपने अंतः करण के सुख के लिए इष्टदेव श्री रघुनाथ जी की मनोहर गाथा की सुन्दर भाषा में रचना करता हूँ। (५)

जेहि सुमिरत सिध होइ, गण नायक करिवर बदन।
करउ अनुग्रह सोइ, बुद्धि राशि शुभ गुण सदन।।

मूक होहिं वाचाल, पंगु चढ़इ गिरिवर गहन।
जासु कृपा सुदयालु, द्रवउ सकल कलिमल दहन।।

जिसका स्मरण करने मात्र से जिनका हाथी जैसा बदन है वह गणेश जी सिद्ध हो गये। वह परमेश्वर मुझ पर अनुग्रह करे जो बुद्धि को उत्पन्न करने वाला और सब गुणों का घर है तथा जिसके स्मरण करने से गूँगा वाचाल हो जाता है और पंगु गंभीर पर्वतों पर चढ़ जाता है। जिसकी कृपा से और सुन्दर दयालुता से काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह आदि कलियुग के सभी मल भस्म हो जाते हैं। (६)

नील सरोरुह स्याम, तरुण अरुण वारिज नयन।
करहु सो मम उर धाम, सदा क्षीर सागर सयन।।

कुन्द इन्दु सम देह, उमा रमण करूणा अयन।
जाहि दीन पर नेह, करहु कृपा मर्दन मयन।।

जो नील कमल के समान श्यामवर्ण और पूर्ण खिले हुए लाल कमल के समान जिनके नेत्र हैं, जो सदाक्षीरसागर में शयन करते हैं वे प्रभु मेरे हृदय में निवास करें। जिनका चमेली के फूल तथा चन्द्रमा के समान उज्ज्वल वदन है जो पार्वती के प्यारे और दया के धाम हैं जिनका दीनों पर स्नेह है वे कामदेव के मर्दन करने वाले शिव जी मुझपर कृपा करें। (७)

वन्दौं गुरुपद कंज, कृपासिन्धु नररूप हरि।
महामोह तम पुञ्ज, जासु वचन रवि करनि कर।।

मनुष्य रूप में साक्षात् भगवान विष्णु जो तीनों तापों को हरण करने वाले कृपा के समुद्र हैं, ऐसे सद्गुरुदेव के चरण कमलों की मैं वन्दना करता हूँ कि जिनके वचन से महान् मोह और अज्ञान अन्धकार का ढेर ऐसे नष्ट हो जाता है कि जैसे सूर्य के उदय होने पर रात्रि का अन्धकार नष्ट हो जाता है। (८)

वन्दौं गुरुपद पदुम परागा। सुरुचि सुवास सरस अनुरागा।।
अमिय मूरिमय चूरण चारू। समन सकल भवरुज परिवारू।।

सुकृति शंभुतन विमल विभूती। मंजुल मंगल मोद प्रसूती।।
जन मन मंजु मुकुर मल हरनी। किये तिलक गुण गण वशकरनी।।

श्री सद्गुरु के चरण-रज की वन्दना करता हूँ, वह रज सुरुचि-सुन्दर स्वाद, सुगन्ध और प्रेम रस से भरी है। वह अमृत बूटी के सदृश सुन्दर चूरण काम, क्रोध, लोभ, मद और मोह को नाश करने वाली है। उत्तम गुणों को देने वाली पवित्र विभूति जो भगवान शंकर के तन पर शोभायमान है वह मन के सभी दोषों को दूर कर के मंगल, मोद और ब्रह्मानन्द की दाता है, वह भक्त जनों के मन रूपी दर्पण के मल को दूर करके तथा तिलक करने पर सभी गुण समूहों को वश में करती है। (९)

श्री गुरुपद नख मनिगन जोती। सुमिरत दिव्य दृष्टि हिय होती।।
दलन मोह तम हंस प्रकाशू। बड़े भाग उर आवहिं जासू।।

उघरहिं विमल विलोचन ही के। मिटहिं दोष दुःख भव रजनी के।।
सूझहिं राम चरित मणि माणिक। गुपुत प्रगट जहं जो जेहि खानिक।।

श्री सद्गुरु के चरणों के नाखूनों की ज्योति मणियों के प्रकाश के समान है जिसका स्मरण करते ही हृदय में दिव्य-दृष्टि उत्पन्न होती है। वह प्रकाश स्वरूप हंस जिसके हृदय में आता है वह बड़ा ही भाग्यशाली है, उसका अज्ञानान्धकार और माया का मोह मिट जाता है। श्री सद्गुरु के चरणों का हृदय में ध्यान आते ही हृदय के निर्मल नेत्र खुल जाते हैं और संसार रूपी रात्रि के सभी दोष, दुःख मिट जाते हैं और भगवान के गुप्त तथा प्रकट जितने भी चरित्र जो भी, जहाँ भी हैं सब मणियों की खान की भाँति दीखने लगते हैं। (१०)

यथा सुअञ्जन अंजि दृग, साधक सिद्ध सुजान।
कौतुक देखहिं सैल बन, भूतल भूरि निधान।।

गुरु पद पर मृदु मंजुल अंजन। नयन अमिय दृग दोष विभंजन।।
तेहि करि विमल विवेक विलोचन। वरनऊं राम चरित भव मोचन।।

जिस प्रकार साधक और सिद्धजन उत्तम अंजन आँखों में लगाकर वन-पर्वतों में नानाभाँति के खेल देखते हैं और पृथ्वी के अन्दर-बाहर की सब खान देखते हैं। सद्गुरु के चरणों की रज कोमल और सुन्दर अमृतमय अंजन है जो नेत्रों के दोषों का नाश करने वाली है। उस अंजन से ज्ञान नेत्रों को पवित्र करके मैं संसार के दुःखों से छुड़ाने वाले राम के गुणों का वर्णन करता हूँ। (११)

संत वन्दना

वन्दौं प्रथम महीसुर चरणा। मोह जनित संसय सब हरणा।।
सुजन समाज सकल गुणखानी। करहुं प्रणाम सप्रेम सुबानी।।

साधु चरित शुभ सरिस कपासू। निरस विशुद्ध गुण मय फल जासू।।
जो सहि दुःख पर छिद्र दुरावा। वन्दनीय जेहि जग यश पावा।।

प्रथम पृथ्वी के देवता-सन्तजनों के चरणों की वन्दना करता हूँ जो मोह से उत्पन्न होने वाले सभी संशय तथा भ्रम दूर करते हैं। ऐसा सन्तों का समाज सब गुणों की खान है। मैं प्रेम सहित उत्तम वाणी के द्वारा सन्तों के चरणों में प्रणाम करता हूँ। साधु का पवित्र गुण कपास के सदृश है निरस होने पर भी जिसका फल शुद्ध और गुण युक्त है जो स्वयं दुःख सहन करके दूसरों के छिद्रों को ढँकता है इसी प्रकार साधु महान् दुःखों को सहन करके भी दूसरों का हित करता है इसीलिए साधु जगत् वन्दनीय है और सारे जगत् में उसका यश है। (१२)

मुद मंगल मय संत समाजू। जो जग जंगम तीरथ राजू।।
सबहिं सुलभ सब दिन सब देशा। सेवत सादर समन कलेशा।।

राम भक्ति जहं सुरसरि धारा। सरसई ब्रह्म विचार प्रचारा।।
विधि निषेध मय कलिमल हरनी। कर्म कथा रविनंदनि वरनी।।
हरि-हर कथा विराजति बेनी। सुनत सकल मुद मंगल देनी।।

आनन्द और मंगल के देने वाला सन्तों का समाज जगत् में चलता-फिरता तीर्थों का राजा है। सन्तों का समाज रूपी तीर्थ सब देशों में सब समय सभी को सहज ही में प्राप्त हो सकता है और सादरपूर्वक सेवा करने से सभी क्लेशों को नष्ट करता है। सन्त-समाजरूपी प्रयागराज में भगवान की भक्ति ही गंगा की धार है और ब्रह्म का विचार तथा प्रचार सरस्वती की धारा है तथा कलियुग के पापों को हरण करने वाली कर्म-कथा ही यमुना की धार है। सत्संग रूपी गंगा की धार में जो भगवान विष्णु और शंकर की कथा है यह त्रिवेणी रूप से सुशोभित है जो सुनने से मोह और मंगल की दाता है। (१३)

वट विश्वास अचल निज धर्मा। तीरथ राज समाज सुकर्मा।।
अकथ अलौकिक तीरथ राऊ। देय सद्य फल प्रगट प्रभाऊ।।

सुनि समुझहिं जन मुदित मन, मज्जहिं अति अनुराग।
लहहिं चारि फल अछत तनु, साधु समाज प्रयाग।।

सन्त-समाज रूपी प्रयागराज में अपने धर्म में अटल विश्वास ही अक्षय वट है, यह शुभ कर्म करने वाला संत समाज अलौकिक और अकथनीय तीर्थराज है। यह उत्तम फलों को देने वाला है और इसका प्रभाव प्रत्यक्ष ही प्रकट है। जो सुनकर, समझकर अत्यन्त प्रेम से सत्संग रूपी गंगा में गोता लगायेंगे वे जीवन के फल ध्यान-सुमिरण, नाद और अमृतपान जो इस तन में हैं प्राप्त कर लेंगे। अतः यह साधु समाज ही तीर्थराज प्रयाग है। (१४)

मज्जन फल पेखिये तत्काला। काक होहिं पिक बकहु मराला।।
सुनि आश्चर्य करे जनि कोई। सत्संगति महिमा नहिं गोई।।
बाल्मीक नारद घट योनी। निज निज मुखन कही निज होनी।।

सत्संग रूपी गंगा में स्नान करने का फल तत्काल ही ऐसा देखने में आता है कि कौवे और बगुले हंस बन जाते हैं। यह सुनकर कोई आश्चर्य न करे क्योंकि सत्संग का प्रभाव छिपा नहीं है। नारद, बाल्मीकि और अगस्त्य जी ने अपने-अपने मुँह से अपने जीवन का वृत्तांत कहा कि वे किस प्रकार सत्संग के द्वारा परमगति को प्राप्त हुये। (१५)

जलचर थलचर नभचर नाना। जे जड़ चेतन जीव जहाना।।
मति कीरति गति भूति भलाई। जब जेहि यतन जहाँ जेहि पाई।।
सो जानब सत्संग प्रभाऊ। लोकहुं वेद न आन उपाऊ।।

जल में रहने वाले जीव, पृथ्वी पर रहने वाले जानवर और मनुष्य तथा आकाश में उड़ने वाले पक्षी आदि जितने भी जड़ और चेतन जीव संसार में हैं इनमें से जिसने भी सद्गति, उत्तम मति और कीर्ति पाई है वह केवल सत्संग से ही पाई है। बिना सत्संग के लोक और वेद में भी दूसरा कोई उपाय नहीं है। (१६)

बिनु सत्संग विवेक न होई। राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।।
संत संगति मुद मंगल मूला। सोई फल सिद्धि सब साधन फूला।।
सठ सुधरहिं सत्संगति पाई। पारस परस कुधातु सुहाई।।

सत्संग के बिना ज्ञान नहीं होता और भगवान की कृपा के बिना सन्त नहीं मिलते। सन्तों की संगति ही आनन्द और मंगल का मूल है। परमेश्वर का ज्ञान ही मंगलों का मूल है और विवेक ज्ञान की सिद्धि तथा सन्त आनन्द और मंगल के फल हैं। जिस प्रकार फल में बीज और रस दोनों विद्यमान हैं उसी प्रकार संत रूपी फल में विवेक रूपी रस और ज्ञान रूपी बीज प्राप्त

होता है। दुष्ट भी सत्संग पाकर सुधर जाते हैं जैसे पारस के छूने से लोहा सोना बन जाता है। (१७)

विधिवश सुजन कुसंगति परहीं। फनि मनि समनिज गुन अनुसरहीं।।
विधि हरि-हर कवि कोविद बानी। कहत साधु महिमा सकुचानी।।
सो मोसन कही जात न कैसे। साक बनिक मणि गुण गण जैसे।।

दैवयोग से यदि सज्जन पुरुष कुसंगति में पड़ जाए तो वह साँप की मणि की भाँति अपने गुणों को नहीं छोड़ता। ब्रह्मा, विष्णु और शिव तथा ज्ञानी और विज्ञानियों की वाणी भी साधु की महिमा गाने में सकुचाती है। जिस प्रकार साक बेचने वाला मणियों के गुण वर्णन नहीं कर सकता, उसी प्रकार मैं संतों के गुणों को वर्णन नहीं कर सकता। (१८)

वन्दौं सन्त समान चित्, हित अनहित नहिं कोय।
अंजलिगत सुभ सुमन जिमि, सम सुगंध कर दोय।।

संत सरल चित जगत हित, जानि सुभाव सनेहु।
बाल विनय सुनि करि कृपा, राम चरण रति देहू।।

मैं उन सन्तों की वन्दना करता हूँ जिनका समान चित्त जगत् के हित के लिए है। उनका न कोई मित्र है और न कोई शत्रु, जिस प्रकार दायें और बायें दोनों हाथ की अंजलि में पुष्प समान रूप से सुगन्ध देते हैं, वह दायें बायें का विचार नहीं करते इसी प्रकार सन्तजन शत्रु और मित्र, भला और बुरा न विचार कर सबको समान सत्संग देते हैं। सन्तों का हृदय सरल स्वभाव जगत् के हित के लिए है, उनका ऐसा स्वभाव और प्रेम जानकर विनय करता हूँ वे मुझ बालक की विनय सुनकर कृपा करके भगवान के चरणों में प्रीति दें। (१९)

खल वन्दना

बहुरि बंदि खल गन सत भाएं। जे बिनु काज दाहिने बाएं।।
पर हित हानि लाभ जिन केरें। उजरें हर्ष विषाद बसेरें।।
हरि हर यश राकेश राहु से। पर अकाज भट सहस बाहु से।।
जे पर दोष लखहिं सहसाखी। पर हित घृत जिनके मन माखी।।
पर अकाज लगि तनु परिहरहीं। जिमि हिम उपल कृषी दल गरहीं।।

अब मैं सच्चे भाव से दुष्टों को प्रणाम करता हूँ जो बिना ही प्रयोजन अपना हित करने वाले के विरुद्ध आचरण करते हैं। दूसरों के हित की हानि ही जिनकी दृष्टि में लाभ है। जिनको दूसरों के उजड़ने में हर्ष और बसने में दुःख होता है। जो भगवान विष्णु और शंकर के यशरूपी चन्द्रमा के लिए राहु के समान हैं और दूसरों की बुराई करने में सहस्रबाहु के समान हैं। जो दूसरों के दोषों को हजार आँखों से देखते हैं और दूसरों के हितरूपी घी के लिए जिनका मन मक्खी के समान है। जिस प्रकार ओले खेती का नाश करके स्वयं गल जाते हैं उसी प्रकार दुष्टजन दूसरों का काम बिगाड़ने के लिए प्राण तक न्यौछावर कर देते हैं। (२०)

तेज कृषाणु रोव महिषेसा। अघ अवगुण धन धनी धनेसा।।
उदय केतु सम हित सबहीके। कुम्भकरण सभ सोवत नीके।।

जो क्रोधाग्नि में यमराज के समान तेज हैं और पाप तथा अवगुण रूपी धन में कुबेर के समान धनी हैं। जिनकी बढ़ती सभी के हित का नाश करने के लिए केतु अर्थात् पुच्छल तारे के समान हैं। कुंभकरण की भाँति इनके सोते रहने में ही भलाई है। (२१)

वन्दौं खल जस शेष सरोषा। सहस वदन वरनई पर दोषा।।
पुनि प्रनवऊं पृथुराज समाना। पर अघ सुनई सहस दशकाना।।

बहुरि सक्र सम विनवऊं तेहीं। संतत सुरा नीक हित जेहीं।।
बचन बज्र जेहि सदा पिआरा। सहस नयन परदोष निहारा।।

मैं दुष्टों को सहस्र मुख वाले शेष जी के समान समझ कर वन्दना करता हूँ। जो पराये दोषों को हजार बार बड़े रोष के साथ वर्णन करते हैं। पुनः उनको राजा पृथु के समान जानकर प्रणाम करता हूँ जो दस हजार कानों से दूसरों के दोषों को सुनते हैं। फिर इन्द्र के समान मानकर विनय करता हूँ जिनको मदिरा अच्छी और हितकर जान पड़ती है। जिनको कठोर वचन रूपी वज्र सदा प्यारा है, जो दोषों को हजार आँखों से देखते हैं। (२२)

उदासीन अरि मीत हित, सुनत जरहिं खल रीत।
जानि पानि युग जोरि जन, विनती करइ सप्रीत।।

मैं आपन दिशि कीन्ह निहोरा। तिन्ह निज ओर न लाउब भोरा।।
वायस पालिए अति अनुरागा। होंहिं निरामिष कबहुं कि कागा।।

दुष्ट पुरुषों का स्वभाव है कि वे चाहे कोई उदासी-अर्थात् वैराग्यवान हो या शत्रु हो या मित्र, किसी का भी हित सुनकर जलते हैं ऐसी उनकी रीत है। यह जानकर दोनों हाथ जोड़कर प्रेम पूर्वक सेवक विनय करता है। मैंने अपनी ओर से विनती की है परन्तु वे अपनी ओर से कभी नहीं चूकेंगे। कौवे को चाहे कितने ही प्रेम से क्यों न पालिये परन्तु क्या? वे कभी भी मांस के त्यागी हो सकते हैं! (२३)

* संत और असन्तों की वन्दना *

वन्दौं संत असज्जन चरणा। दुःख प्रद उभय बीच कछु करना।।
बिछुरत एक प्राण हर लेहीं। मिलत एक दारुण दुःख देहीं।।

उपजहिं एक संग जग माहीं। जलज जोंक जिमि गुण विलगाहीं।।
सुधा सुरा सम साधु असाधू। जनक एक जग जलधि अगाधू।।

मैं सन्त-असन्त दोनों की वन्दना करता हूँ। दोनों ही दुःख देने वाले है परन्तु उनमें अन्तर यह है कि एक जब बिछुड़ता है तो प्राण निकलने के समान दुःख देता है और जब एक असन्त मिलता है तो वह भी महान् दुःख ही देता है। ये दोनों जगत् में एक साथ पैदा होते हैं और इनका पिता भी एक ही है जो इनके बनाने वाला है। ये साधु और असाधु अपने गुणों के अनुसार होते हैं जैसे जल में उत्पन्न होने वाला कमल और जोंक इन दोनों का गुण अलग-अलग है। साधु अमृत के समान और असाधु विष के समान हैं। (२४)

भल अनभल निज निज करतूती। लहत सुयश अपलोक विभूती।।
सुधा सुधाकर सुरसरि साधू। गरल अनल कलिमल सरि व्याधू।।
गुण अवगुण जानत सब कोई। जो जेहि भाव नीक तेहि सोई।।

भले और बुरे अपनी-अपनी करनी के अनुसार सुन्दर यश और अपयश की सम्पत्ति प्राप्त करते हैं इन दोनों विभूतियों का यश-संसार गाता है। साधु ज्ञानरूपी अमृत देकर सत्संग रूपी गंगा की धार बहाता है और असाधु कलियुग के अवगुणों में लिप्त व्याध जैसों को अग्नि के समान जलाने वाले विष को पिला कर मस्त बनाता है फिर उनको धर्म और अधर्म का ज्ञान नहीं रहता। इनके गुण अवगुण सब ही जानते हैं किन्तु जिसे जो अच्छा लगता है वह वही अपनाता है। (२५)

भले भलाई पै लहहिं, लहहीं नीचाई नीच।
सुधा सराहिए अमरता, गरल सराहिए मीच।।

खल अघअगुण साधु गुण गाहा। उभय अपार उदधि अवगाहा।।
तेहितें कछु गुण दोष बखाने। संग्रह त्याग न बिनु पहिचाने।।

भले पुरुष भलाई ही ग्रहण करते हैं और नीच पुरुष नीचता को ही ग्रहण करते हैं। अमृत की सराहना अमर करने में अर्थात् मृत्यु के बन्धन से छुड़ाने में होती है और विष की सराहना मारने और बेहोश

करने में होता है। दुष्टों के पापों अथवा अवगुणों की और साधुओं के गुणों की गाथाएँ दोनों ही अपार तथा अथाह समुद्र हैं। इसी से कुछ गुण और दोषों का वर्णन किया गया है, क्योंकि बिना जाने उनका ग्रहण या त्याग नहीं हो सकता। (२६)

भलेउ पोच सब विधि उपजाए। गनिगुण दोष वेद बिलगाये।।
कहहिं वेद इतिहास पुराना। विधि प्रपंच गुण अवगुण साना।।

दुःख सुख पाप पुण्य दिन राती। साधु असाधु सुजाति कुजाती।।
दानव देव ऊंच अरु नीचू। अमिय सजीवन माहुर मीचू।।

भले और बुरे इन सभी जीवों को ब्रह्मा ने बनाया है क्योंकि बिना दोनों के सृष्टि नहीं होती इसलिए सभी वेद-शास्त्र तथा इतिहास और पुराण कहते हैं कि ब्रह्मा का प्रपंच गुण और अवगुणों से सना है। सुख-दुःख, पाप-पुण्य, दिन-रात, साधु-असाधु, अच्छे और बुरे, दानव और देवता, ऊँच अरु नीच, अमृत-विष, जीवन-मृत्यु। (२७)

काशी मग सुरसरि क्रमनाशा। मरु मारव महिदेव गवासा।।
स्वर्ग-नरक अनुराग-विरागा। निगमागम गुण दोष विभागा।।

जड़ चेतन गुण दोष मय, विश्व कीन्ह करतार।
संत हंसगुण गहहिं पय, परिहरि वारि विकार।।

काशी-मगध, सुरसरि-कर्मनाशा, मारवाड़-मालवा, संत-कसाई, स्वर्ग-नरक, प्रेम और वैराग्य इन सब गुण अवगुणों का वेद शास्त्रों ने विभाग कर दिया है। विधाता ने इस जड़ और चेतन विश्व को गुण और दोषों के कारण ही रचा है परन्तु सन्त हंस के गुणों को ही ग्रहण करते हैं और अवगुणों को त्याग देते हैं। (२८)

अस विवेक जब देइ विधाता। तब तजि दोष गुणहिं मन राता।।
काल स्वभाव कर्म वरिआई। भलेउ प्रकृतिवश चूकइ भलाई।।

सो सुधार हरि जन जिमि लेहीं। दलि दुःख दोष विमल यश देहीं।।
खलहुं करहिं भल पाय सुसंगू। मिटहि न मलीन स्वभाव अभंगू।।

ज्ञानदाता हंस जब ज्ञान देता है तब मन दोषों को त्यागकर गुणों में लवलीन होता है। समयानुसार स्वभाव और कर्म के प्रभाव से प्रकृति के वश हुए भले पुरुष भी भलाई से चूक जाते हैं परन्तु हरिभक्त उनके दुःख और दोषों को मिटाकर सुधार कर लेते हैं और निर्मल यश देते हैं। जो दुष्ट भी सन्तों की संगति पाकर अच्छे काम करने लगते हैं परन्तु उनके मलीन-नीच स्वभाव हैं न बदलने वाले, वो नहीं मिटते। (२९)

लखि सुवेष जग वंचक जेउ। भेष प्रताप पूजियत तेउ।।
उघरहिं अन्त न होइ निबाहू। कालनेमि जिमि रावण राहू।।

कियेहुं कुवेष साधु सनमानू। जिमि जग जामवंत हनुमानू।।
हानि कुसंग सुसंगति लाहू। लोकहु वेद विदित सब काहू।।

धर्म हीन, नास्तिक पुरुष भी भेष के प्रताप से पूजे जाते हैं किन्तु भेद खुल जाने पर उनका निर्वाह नहीं होता। जिस प्रकार कालनेमि, रावण और राहु का अन्त में नाश हुआ। जो सच्चे सन्त हैं वे चाहे किसी भेष में हों उनका सम्मान ही होता है, जिस प्रकार जामवन्त और हनुमान। बुरे सन्तों की संगत से हानि और अच्छे सन्तों की संगत से लाभ होता है यह लोक और वेद में विदित है और सभी जानते हैं। (३०)

साधु असाधु सदन सुक सारी। सुमरहिं राम देहिं गनि गारी।।
गगन चढ़ई रज पवन प्रसंगा। कीचहि मिलहि नीच जल संगा।।

धूम कुसंगति कारिख होई। लिखिय पुरान मंजु मसि सोई।।
सोई जल अनल अनिल संघाता। होइ जलद जग जीवन दाता।।

तोता और मैना साधु के घर राम-राम बोलते हैं और असाधु के घर गाली देते हैं। धूल पवन के साथ आकाश में उड़ जाती है और जल के

संग से कीचड़ बन जाती है फिर वही धूम्र की संगति से स्याही बन कर पुराण लिखती है। उसी कीचड़ का जल अग्नि और हवा के संयोग से बादल बनकर जगत् को जीवन देता है। (३१)

ग्रह भेषज जल पवन पट, पाय कुयोग सुयोग।
होंहि सुवस्तु कुवस्तु जग, लखहिं सुलक्षण लोग।।

सम प्रकाश तम पाख दुहुं, नाम भेद विधि कीन्ह।
शशिशोषक पोषक समुझि, जग यश अपयश दीन्ह।।

ग्रह, औषधि, जल और वायु, ये सब कुसंग और सुसंग पाकर संसार में भले और बुरे हो जाते हैं। चतुर एवं विचारशील मनुष्य ही इस बात को जान पाते हैं। महीने के दो पखवाड़ों में उजाला और अंधेरा समान ही रहता है परन्तु विधाता ने इनके नाम में भेद कर दिया है। बढ़ते हुए चन्द्रमा की रात को पोषक और घटते हुए चन्द्रमा को शोषक समझकर संसार ने यश और अपयश दिया है। (३२)

देव दनुज नर नाग खग, प्रेत पितर गंधर्व।
बंदउं किन्नर रजनीचर, कृपा करहु अब सर्व।।

आकर चारि लाख चौरासी। जाति जीव जल थल नभ बासी।।
सियाराम मय सब जग जानी। करहुं प्रणाम जोरि युग पानी।।

देवता, दानव, मानव, नाग, पक्षी, प्रेत, पितर, गंधर्व, किन्नर तथा निशाचर सब को मैं प्रणाम करता हूँ, अब सब मुझ पर कृपा करें। चारखानि अंडज, पिण्डज, उद्भिज और स्वेदज् इनमें चौरासी लाख योनियाँ उत्पन्न होती हैं और अनेक जाति के जीव थल में रहने वाले, आकाश और जल में रहने वाले सभी जीवों में सियाराम को व्यापक जानकर दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करता हूँ। (३३)

जानि कृपा करि किंकर मोहू। सब मिलि करहु छांडि छल छोहू।।
निज बुद्धि बल भरोसमोहि नाहीं। ताते विनय करहुं सब पाहीं।।

करन चहहुं रघुपति गुन गाहा। लघुमति मोरि चरित अवगाहा।।
सूझ न एकउ आन उपाऊ। मन मति रंक मनोरथ राऊ।।

मुझे अपना दास जानकर कृपा की खान आप सब मिलकर छल छोड़कर कृपा कीजिये। मुझे अपनी बुद्धि बल का भरोसा नहीं है, इसीलिए मैं सबसे विनय करता हूँ। नाम सर्वव्यापक है उसका न आदि है न अन्त ही, जिसके गुणों का मैं वर्णन करना चाहता हूँ। मेरी बुद्धि छोटी है और नाम के गुण अथाह हैं किन्तु दूसरा कोई उपाय भी नहीं सूझता। मेरा मन और बुद्धि कंगाल है और मनोरथ राजा है। (३४)

मति अति नीच ऊँच रुचिआछी। चहिए अमिय जग जुरइ न छाछी।।
क्षमिहहिं सज्जन मोरि ढिठाई। सुनिहहिं बाल बचन मन लाई।।

ज्यों बालक कह तोतरी बाता। सुनहिं मुदित मन पितु अरु माता।।
हंसिहहिं कूर कुटिल कुविचारी। जे परदूषण भूषण धारी।।

मेरी बुद्धि बहुत छोटी है और चाह बड़ी ऊँची है, चाह तो अमृत पीने की परन्तु जगत् में मिलती छाछ भी नहीं। सज्जन मेरी ढिठाई को क्षमा करेंगे और मुझ बालक के वचनों को मन लगाकर सुनेंगे, जिस प्रकार बालक तुतलाकर बोलता है तो उसकी बात माता-पिता प्रसन्न मन से सुनते हैं। जो दूसरों के दोषों को ही भूषण की भाँति धारण करते हैं वे क्रूर, कुटिल तथा बुरे विचार के लोग हँसेंगे। (३५)

निज कवित केहि लाग न नीका। सरस होउ अथवा अति फीका।।
जे पर भनिति सुनत हर्षाहीं। ते वर पुरुष बहुत जग नाहीं।।

जग बहु नर सर सरि सम भाई। जे निज बाढ़ि बढ़हिं जल पाई।।
सज्जन सुकृत सिंधु सम कोई। देखि पूर विधु बाढ़हिं जोई।।

अपनी कविता चाहे रसीली हो या फीकी हो किसे अच्छी नहीं लगती! जो दूसरों की रचना को सुनकर हर्षित होते हैं ऐसे उत्तम पुरुष

जगत् में बहुत नहीं हैं। जगत् में मनुष्य तालाबों और नदियों की भाँति जल पाकर अपनी बाढ़ से ही बढ़ते हैं अपनी उन्नति में ही प्रसन्न रहते हैं, समुद्र के समान तो शुभ कर्म करने वाला सज्जन कोई विरला ही होता है जो चन्द्रमा को पूर्ण देखकर दूसरों की बढ़ती देखकर खुशी से उमड़ पड़ता है। (३६)

भाग छोट अभिलाष बड़, करहुं एक विश्वास।
पइहहिं सुख सुनि सुजन सब, खल करिहहिं उपहास।।

खल परिहास होइ हित मोरा। काक कहहिं कलकंठ कठोरा।।
'हंस' ही बक दादुर चातकहीं। हँसहिं मलीनखल विमल वतकहीं।।

मेरा भाग्य बहुत छोटा है और अभिलाषा बहुत बड़ी है परन्तु मुझे यह विश्वास है कि इसे सुनकर सभी सज्जन सुख पायेंगे और दुष्ट हँसी उड़ायेंगे। दुष्टों के हँसने से मेरा हित ही होगा क्योंकि मधुर कंठ वाली कोयल को कौवे कठोर ही कहा करते हैं। जैसे बगुले हंस को और मेंढक पपीहे को देखकर हँसते हैं। वैसे ही मलीन मन वाले दुष्ट निर्मल वाणी को सुनकर हँसते हैं। (३७)

कवित रसिक न रामपद नेहू। तिन्ह कहं सुखद हास रस एहू।।
भाषा भनिति भोरि मति मोरी। हंसिबे योग हंसे नहिं खोरी।।
प्रभुपद प्रीति न सामुझि नीकी। तिनहिं कथा सुनि लागहिं फीकी।।

जो न तो कविता के रसिक हैं और न जिनका प्रभु के चरणों में प्रेम ही है उन्हें यह कविता सुखद हास्यरस का काम देगी। प्रथम तो यह भाषा की रचना है दूसरे मेरी बुद्धि भोली है अतः हँसने योग्य यदि कोई हँसता भी है तो उसे कोई दोष नहीं। जिन्हें प्रभु के चरणों में न तो प्रेम ही है और न उनकी समझ ही अच्छी है, उन्हें यह कथा सुनने में फीकी ही लगेगी। (३८)

हरि-हर पद रति मति न कुतरकी। तिन्ह कहं मधुर कथा रघुबर की।।
राम भक्ति भूषित जिय जानी। सुनिहहिं सुजन सराहिं सुबानी।।
कवि न होउं नहिं वचन प्रवीनू। सकल कला सब विद्या हीनू।।

त्रितापहारी-ज्ञानदाता भगवान विष्णु एवं ब्रह्मानन्द दाता शिव जी के चरणों में जिनका प्रेम है तथा इनके प्रति जिनकी बुद्धि में कोई कुतर्क नहीं है उन्हें यह कथा मीठी लगेगी। वे इस कथा को अपने हृदय में भक्ति रूपी आभूषणों से विभूषित जानकर सुन्दर वाणी से सराहना करते हुए सुनेंगे। मैं न तो कवि हूँ और न वाक्य रचना में कुशल हूँ मैं तो सब कलाओं तथा विद्याओं से रहित हूँ। (३९)

आखर अर्थ अलंकृत नाना। छन्द प्रबन्ध अनेक विधाना।।
भाव भेद रस भेद अपारा। कवित दोष गुन विविध प्रकारा।।
कवित विवेक एक नहीं मोरे। सत्य कहौं लिखी कागद कोरे।।

भाँति-भाँति के अक्षर, अर्थ और अलंकार अनेक प्रकार की छन्द रचना, भावों और रसों के अपार भेद तथा कविता के भाँति-भाँति के गुण-दोष होते हैं। इनमें से काव्य सम्बन्धी एक भी बात का मुझे ज्ञान नहीं है, यह मैं कोरे कागज पर लिखकर सत्य-असत्य कहता हूँ। (४०)

रामायण का विषय

भनिति मोरि सब गुण रहित, विश्व विदित गुण एक।
सो विचारि सुनिहहिं सुमति, जिन्ह के विमल विवेक।।

एहिमंह रघुपति नाम उदारा। जग पावन पुरान श्रुति सारा।।
मंगल भवन अमंगल हारी। उमा सहित जेहि जप त्रिपुरारी।।

मेरी रचना सब गुणों से रहित है परन्तु इसमें जगत् प्रसिद्ध एक गुण है। उसे विचार कर उत्तम बुद्धि वाले परम ज्ञानी जन इसे सुनेंगे।

इसमें राम का उदार नाम है जो अत्यन्त ही पवित्र तथा वेद-शास्त्रों व पुराणों का सार, सब मंगलों का घर और अमंगलों के नाश करने वाला है। जिसे पार्वती सहित भगवान शिव जी सदा जपा करते हैं। (४१)

भनिति विचित्र सुकवि कृत जोऊ। राम नाम बिनु सोह न सोऊ।।
विधु बदनी सब भांति संवारी। सोह न वसन बिना वर नारी।।

सब गुण रहित कुकविकृत बानी। राम-राम यश अंकित जानी।।
सादर कहहिं सुनहिं बुध ताही। मधुकर सरिस संत गुण ग्राही।।

जो अच्छे कवि के द्वारा रची हुई बड़ी अनूठी कविता है वह भी राम-नाम के बिना शोभा नहीं पाती। जैसे चन्द्रमा के समान सुन्दर मुख वाली दुल्हन सब प्रकार से सुसज्जित होने पर भी वस्त्र के बिना शोभा नहीं पाती। किन्तु राम के नाम का यश अंकित जानकर बुरे कवि की गुणों से रहित रची हुई कविता को भी बुद्धिमान मनुष्य आदर पूर्वक कहते और सुनते हैं क्योंकि संतजन भौंरे के समान गुण ही को ग्रहण करने वाले होते हैं। (४२)

यदपि कवित रस एकौ नाहीं। नाम प्रताप प्रगट एहि माहीं।।
सोइ भरोस मोरे मन आवा। केहि न सुसंग बड़प्पन पावा।।

धूमहुं तजइ सहज करुआई। अगर प्रसंग सुगंध बसाई।।
भनिति भदेस वस्तु भलि बरनी। राम कथा जग मंगल करनी।।

यद्यपि मेरी इस रचना में कविता का एक भी रस नहीं है तब भी इस में नाम का प्रताप प्रकट है। मेरे मन में यही एक भरोसा आता है कि सत्संग से किसने बड़प्पन नहीं पाया? जिस प्रकार काला धुआँ भी चन्दन की लकड़ी से उत्पन्न होकर कालेपन को छोड़ सुगन्धि देता है और सबको प्यारा लगता है। इसी प्रकार मेरी कविता भले ही भद्दी है पर इसमें जगत् का कल्याण करने वाले नाम का अच्छी प्रकार से वर्णन है। नाम की कथा जगत् में मंगल करने वाली है। (४३)

मंगल करनी कलिमल हरनी तुलसी कथा रघुनाथ की।।
गति कूर कविता सरित की ज्यों सरित पावन पाथकी।।

प्रभु सुयश संगति भनिति भलि हो इहि सुजन मन भावनी।।
भव अंग भूति मसानकी, सुमिरत सुहावनि पावनी।।

तुलसी की कविता श्री रघुनाथ जी की कथा है यह मंगल करने वाली कथा कलियुग के सब पापों को धोने वाली है। यद्यपि मेरी कविता रूपी नदी की चाल बड़ी टेढ़ी है परन्तु श्री गंगा जी की भाँति पवित्र है। यह प्रभु के उत्तर यश की संगति से सुन्दर तथा मन को लुभाने वाली हो जायेगी। जिस प्रकार यह देह मशान की विभूति है किन्तु नाम का सुमिरन करने से देह पवित्र और सुहावनी बन जाती है। (४४)

प्रिय लागहिं अति सबहिं मम, भनिति राम यश संग।
दारु विचार कि करिये कोऊ, बंदिय मलय प्रसंग।।

श्याम सुरभि पय विशद अति, गुनद करहिं सब पान।
गिरा ग्राम्य सियराम यश, गावहिं सुनहिं सुजान।।

प्रभु के नाम की महिमा के साथ मेरी यह कविता सभी को प्यारी लगेगी। जिस प्रकार चन्दन के साथ जब वन्दना की जाती है तो कोई काष्ठ का विचार नहीं करता और उत्तम गुणकारी समझकर काली गाय का दूध पीते हैं उसी प्रकार मातृ-भाषा में होने पर भी नाम के यश और गुणों को बुद्धिमान सन्तजन बड़े चाव से गाते और सुनते हैं। (४५)

मणि माणिक मुक्ता छवि जैसी। अहि गिरि गज शिर सोह न तैसी।।
नृप क्रीट तरुणी तन पाई। लहहीं सकल शोभा अधिकाई।।
तैसे ही सुकवि कवित बुध कहहीं। उपजहिं अनत-अनत छवि लहहीं।।

मणि, माणिकों और मोतियों की जैसी छवि है वैसी साँप, पर्वत और हाथी के सिर में शोभा नहीं पातीं, जैसी अधिक शोभा राजा के

मुकुट और नव युवती के बदन को पाकर प्राप्त होती है। तैसे ही बुद्धिमान कहते हैं कि उत्तम कवि की कविता उत्पन्न कहीं होती है और शोभा कहीं जाकर पाती है। (४६)

भक्ति हेतु विधि भवन विहाई। सुमिरन सारद आवति धाई।।
राम चरित सर बिनु अन्हवाये। सो श्रम जाय न कोटि उपाये।।

कवि कोविद अस हृदय विचारी। गावहिं हरियश कलिमल हारी।।
कीन्हे प्राकृत जन गुण गाना। सिर धुनि गिरा लगत पछिताना।।

भक्ति के कारण कवि के स्मरण करते ही सरस्वती जी ब्रह्मलोक को छोड़कर दौड़ी आती हैं। उनकी थकावट प्रभु के नाम-गुण रूपी सरोवर में स्नान कराये बिना दूसरे करोड़ों उपायों से नहीं मिटती। कवि और ज्ञानी पंडित ऐसा विचार कर कलियुग के पापों को हरने वाले प्रभु आनन्दकंद सच्चिदानंद भगवान के गुण गाते हैं। साधारण मनुष्यों के गुण गाने से सरस्वती जी सिर धुनकर पछताने लग जाती हैं। (४७)

हृदय सिन्धु मति सीप समाना। स्वाति शारदा कहहिं सुजाना।।
जौं वर्षइ वर वारि विचारु। होहिं कवित मुक्तामणि चारु।।

युक्ति वेधि पुनि पोहि अहिं, राम चरित वर ताग।
पहिरहिं सज्जन विमल उर, शोभा अति अनुराग।।

संतजन हृदय को समुद्र, बुद्धि को सीप और सरस्वती को स्वाति नक्षत्र के समान कहते हैं। इसमें यदि श्रेष्ठ विचार रूपी जल बरसता है तो मुक्तामणि के समान सुन्दर कविता होती है। उन मुक्तामणियों को युक्ति से वेधकर नामगुण रूपी धागे में पिरोकर सन्तजन मानसरोवर रूपी निर्मल हृदय में धारण करते हैं। जिससे नाम की शोभा अत्यन्त प्रेम बढ़ाती है। (४८)

जे जन्में कलिकाल कराला। करतब वायस वेष मराला।।
चलत कुपंथ वेद मग छांड़े। कपट कलेवर कलिमल भांड़े।।

वंचक भक्त कहाय राम के। किंकर कंचन कोह काम के।।
तिन्ह महं प्रथम रेख जग मोरी। धीग धर्म ध्वज धंधक धोरी।।

जो विकराल कलियुग के रूप में जन्मे हैं जिनका कर्त्तव्य कौवे के समान और वेष हंस का-सा है। जो सत्यमार्ग को छोड़ वेद-विधि को त्यागकर कुमार्ग पर चलते हैं, जो कपट की मूर्ति और कलियुग के अवतार तथा पापों के भण्डार हैं। जो नाम मात्र के भक्त कहलाकर धन के लोभ से क्रोध और काम के गुलाम हैं। उनमें सबसे पहले मेरी ही गिनती है जो धींगा-धींगी धर्म की ध्वजा फहराना ही अपना धंधा बना रखा है। (४६)

जो अपने अवगुण सब कहऊं। बाढ़इ कथा पर नहिं लहऊं।।
ताते में अति अल्प बखाने। थोरे महं जान हहिं सयाने।।

समुझि विविध विधि विन्ती मोरी। कोउ न कथा सुनि देइहहिं खोरी।।
एतेहु पर करिहहिं जे अशंका। मोहिते अधिक ते जड़मति रंका।।

यदि मैं अपने सब अवगुणों को कहने लगूँ तो कथा बहुत बढ़ जायेगी और मैं पार नहीं पाऊँगा। इसलिए मैंने बहुत थोड़े में ही वर्णन किया है, बुद्धिमान पुरुष थोड़े में ही समझ जायेंगे। मेरी अनेकों प्रकार की विनती को समझकर और इस कथा को सुनकर कोई दोष नहीं देगा। और इतने पर भी जो शंका करेंगे, वे तो मुझ से भी अधिक मूर्ख और बुद्धि के कंगाल हैं। (५०)

कवि न होऊं नहिं चतुर कहाऊं। मति अनुसार राम गुण गाऊं।।
कहं रघुपति कै चरित अपारा। कहं मति मोरि निरत संसारा।।

जेहि मारुत गिरि मेरु उड़ाहीं। कहहु तूल केहि लेखे माहीं।।
समुझत अमित राम प्रभुताई। करत कथा मन अति कदराई।।

मैं न तो कवि हूँ और न मैं चतुर ही कहाता हूँ, मैं तो अपने विचारानुसार नाम के गुण गाता हूँ। कहाँ तो प्रभु के अपार चरित्र और कहाँ संसार में आसक्त मेरी बुद्धि। जिस हवा से सुमेरू पर्वत उड़ जाते हैं उसके सामने रूई किस गिनती में है? प्रभु की प्रभुता को देखकर मेरा मन कविता करने में हिचकता है, वर्णन करने में डरता हूँ। (५१)

शारद शेष हमेश विधि, आगम निगम पुरान।
नेति-नेति कहि जासु गुण, करहिं निरन्तर गान।।

सब जानत प्रभु प्रभुता सोई। तदपि कथे बिन रहा न कोई।।
तहां वेद अस कारण राखा। भजन प्रभाव भांति बहु भाषा।।

सरस्वती जी, शेष जी शिव जी और ब्रह्मा जी तथा वेद-शास्त्र और पुराण ये सब नेति-नेति कहकर सदा जिस प्रभु के गुणगान गाते हैं। प्रभु की प्रभुता को सभी जानते हैं कि वह अकथ है परन्तु फिर भी कहे बिना कोई नहीं रहा। इसका कारण वेद ने यह रखा है और नाम के प्रभाव को भाँति-भाँति से वर्णन किया है। (५२)

एक अनीह अरूप अनामा। अज सतचिदानंद परधामा।।
व्यापक विश्वरूप भगवाना। तेहि धरि देह चरित कृत नाना।।

सो केवल भगतन हित लागी। परम कृपालु प्रनत अनुरागी।।
जेहि जन पर ममता अति छोहू। जेहि करुणा करि कीन्ह न कोहू।।

एक परमेश्वर जो इच्छाओं से रहित है जिसका न कोई रूप है और न कोई नाम है, जो अजन्मा, सत्-चित्-आनंद का परमधाम, सर्वव्यापक विष्णुरूप भगवान है वह दिव्य शरीर धारण कर नाना प्रकार की लीला

करता है। वह कृपालु केवल भक्तों के ही हित के लिए कृपा करता है और अपनी शरण में आये हुए भक्तों से प्रेम करता है जिसकी भक्तों पर बड़ी ममता है। वह दया करके भी क्रोध नहीं करता, वह प्रभु सत्य का पालन करके सतयुग की स्थापना करता है। (५३)

गई बहोर गरीब नेवाजू। सरल सबल साहिब रघुराजू।।
बुध वरनहिं हरियश असजानी। करहिं पुनीत सफल निज बानी।।

तेहि बल में रघुपति गुन गाथा। कहिहउं नाइ राम पद माथा।।
मुनिन्ह प्रथम हरि कीरति गाई। तेहिमग चलत सुगम मोहि भाई।

वह प्रभु बिगड़ी को सुधार कर एवं भूले-भटके हुए जीवों को सद्मार्ग पर लगाकर गरीबों पर दया करता है। वह सरल स्वभाव, सर्व शक्तिवान सबका स्वामी है। यह समझकर बुद्धिमान सन्तजन समयानुसार इष्टदेव भगवान विष्णु का वर्णन करके अपनी वाणी को पवित्र करते हैं। भगवान विष्णु की असीम कृपा के बल पर ही नाम के गुणों की गाथा का वर्णन उनके चरणों में सिर नवाकर करता हूँ। पहिले भी मुनियों ने भगवान विष्णु के ही गुण गाये हैं अतः उसी रास्ते पर चलना मेरे लिए सुगम होगा। (५४)

अति अपार जे सरित वर, जो नृप सेतु कराहिं।
चढ़ि पिपीलिकाउ परमलघु, विन श्रम पारहि जाहिं।।
एहि प्रकार बल मनहिं देखाई। करिहऊं रघुपति कथा सुहाई।।

जो अत्यन्त बड़ी नदियाँ हैं यदि राजा उन पर पुल बँधवा दे तो छोटी-छोटी चींटियाँ भी बिना ही परिश्रम के पार हो जाती हैं। इसी प्रकार प्रभु के सहारे मन को बल दिखाकर सुहावनी कथा की रचना करूँगा। अर्थात् इस कथा में नाम के गुण और प्रभु के यश का वर्णन करूँगा। (५५)

मुनि वन्दना

व्यास आदि कवि पुंगव नाना। जिन्ह सादर हरिचरित बखाना।।
चरण कमल वन्दौं तिन्ह केरे। पुरवहु सकल मनोरथ मेरे।।
कलि के कविन्ह करूँ परनामा। जिन्ह वरणे रघुपति गुन ग्रामा।।

व्यास आदि जो श्रेष्ठ कवि हुए हैं, जिन्होंने बड़े आदर से भगवान विष्णु का सुयश वर्णन किया है। मैं उन सबके चरणों की वन्दना करता हूँ वे मेरे सब मनोरथों को पूरा करें। कलियुग के उन कवियों को भी मैं प्रणाम करता हूँ जिन्होंने नाम के गुण समूहों का वर्णन किया है। (५६)

जे प्राकृत कवि परम सयाने। भाषा जिन्ह हरि चरित बखाने।।
भए जे अहहिं जे होइहहिं आगे। प्रनवउं सबहिं कपट सब त्यागे।।
होउ प्रसन्न देहु वर दानू। साधु समाज भनिति सनमानू।।

जो बड़े बुद्धिमान पैतृक कवि हैं जिन्होंने भाषा में प्रभु के चरित्रों का वर्णन किया है। जो पहले हो चुके हैं, इस समय हैं और जो आगे होंगे, उन सबको मैं सारा कपट त्याग कर प्रणाम करता हूँ। आप सब प्रसन्न होकर यह वरदान दीजिये कि साधु समाज में मेरी कविता का सम्मान हो। (५७)

जो प्रबन्ध बुध नहिं आदरहीं। सो श्रम वादि बाल कवि करहीं।।
कीरति भनिति भूति भलि सोई। सुरसरि सम सबकहं हितहोई।।

राम सुकीरति भनिति भदेसा। असमंजस अस मोहिं अन्देसा।।
तुम्हरी कृपा सुलभ सोउ मोरे। सियनि सुहावन टाट पटोरे।।

बुद्धिमान जिस कविता का आदर नहीं करते, मूरख कवि ही उसकी रचना का व्यर्थ परिश्रम करते हैं। कीर्ति, कविता और सम्पत्ति वही उत्तम है जो गंगा जी की भाँति सबका हित करने वाली हो। नाम के गुणों की

महिमा बड़ी सुन्दर है परन्तु मेरी कविता बड़ी भद्दी है यह उलझन है जिसकी मुझे चिन्ता है परन्तु यह भी आप सबों की कृपा से सुलझ जायेगी। जिस प्रकार रेशम की सिलाई टाट पर भी सुहावनी लगती है उसी प्रकार मेरी इस साधारण सरल कविता में हरिनाम की ज्योति चमकेगी और यह सबको प्यारी लगेगी। (५८)

सरल कवित कीरति विमल, सोइ आदरहिं सुजान।
सहज बैर बिसराइ रिपु, जो सुनि करहिं बखान।।

पुनि बन्दौं सारद सुर सरिता। युगल पुनीत मनोहर चरिता।।
मज्जन पान पाप हर एका। कहत सुनत एक हर अबिबेका।।

चतुर पुरुष उसी कविता का आदर करते हैं जो सरल हो और जिसमें निर्मल गुणों का वर्णन हो, जिसे सुनकर शत्रु भी स्वाभाविक वैर भूलकर सराहना करने लगें। मैं दुबारा फिर सरस्वती जी की और दिव्य गंगा जी की वन्दना करता हूँ, दोनों के पवित्र और मनोहर चरित्र हैं। ज्ञान-गंगा में गोता लगाने व अमृत पान करने से श्री सरस्वती जी पाप रूपी मल को धोती हैं और कहने तथा सुनने से सत्संग रूपी दिव्य गंगा जी अज्ञान को हरती हैं। (५९)

शिव-पार्वती वन्दना

गुरु पितु मातु महेश भवानी। प्रणवउं दीन बन्धु दिन दानी।।
सेवक स्वामि सखा सिय पीके। हित निरुपाधि सबविधि तुलसीके।।

कलि विलोकि जग हित हर गिरजा। सावर मंत्र जाल जिन सिरजा।।
अनमिल आखर अर्थ न जापू। प्रगट प्रभाव महेश प्रतापू।।

जगत् वन्दनीय श्री भोलेनाथ-शिव जी एवं जगत् माता पार्वती जी को मैं प्रणाम करता हूँ जो माता-पिता और गुरु हैं। दीनबन्धु, नित्य दान करने

वाले जो विष्णु के प्रिय और सेवक के स्वामी हैं तथा मुझ ''तुलसीदास'' का सब प्रकार से बाधा रहित हित करने वाले हैं। जिन शिव-पार्वती ने कलियुग को देखकर जगत् के हित के लिए सावर मंत्र का जाल रचा जिसमें सारा विश्व बँधा है। वह मंत्र सावर अर्थात् सर्वेश्वर, निरक्षर और निर्वचनीय है। उसका न अर्थ ही है और न जाप ही है वह भगवान शिव जी के प्रताप से प्रकट होता है। (६0)

सो उमेश मोहिंपर अनुकूला। करहिं कथा मुद मंगल मूला।।
सुमिरि शिवा-शिव पाय पसाऊ। वरनऊं रामचरित चितचाऊ।।

सपनेहुं साचेहुं मोहिंपर, जो हर-गौरि पसाउ।
तौ फिर होउ जो कहेउं सब, भाषा भनिति प्रभाउ।।

वे उमापति महादेव मुझ पर प्रसन्न होकर इस कथा को आनंद और मंगल की मूल बनायेंगे। अपने हृदय में शिव-पार्वती का स्मरण करके और उनका प्रसाद पाकर मैं चाव भरे चित्त से नाम के गुणों का वर्णन करता हूँ। यदि मुझ पर स्वप्न में और प्रत्यक्ष में भी प्रसन्न हैं तो जो मैंने कहा है वह सब सत्य हो। (६१)

भनिति मोरि शिव कृपा विभाति। शशि समाज मिलि मनहु सुराती।।
जे एहि कथहिं सनेह समेता। कहिहहिं सुनिअहिं समुझि सचेता।।
होइहहिं राम चरण अनुरागी। कलिमल रहित सुमंगल भागी।।

मेरी कविता शिव जी की कृपा से ऐसी सुशोभित होगी जैसी तारागणों के साथ पूर्ण चन्द्रमा की चाँदनी रात शोभा पाती है। जो इस कथा को प्रेम सहित सावधानी के साथ समझ-बूझकर कहेंगे और सुनेंगे वे कलियुग के पापों से रहित होकर सुन्दर कल्याण के भागी बनेंगे। (६२)

अवध निवासी और भक्तों की वंदना

वन्दौं अवधपुरी अति पावनि। सरजू सरि कलि कलुष नशावनि।।
प्रणवउं पुर नर नारि बहोरी। ममता जिन्हपर प्रभुहि न थोरी।।
सिय निन्दक अघ ओघ नशाए। लोक विशोक बनाय बसाए।।

पवित्र अयोध्यापुरी और कलियुग के दोषों को नष्ट करने वाली सरयू नदी की वंदना करता हूँ। अवधवासी उन नर-नारियों की भी वंदना करता हूँ जो श्री सीता जी के निंदक होने पर भी जिनके पापों को मिटाकर प्रभु ने अत्यन्त कृपा करके अयोध्यापुरी में बसाया और उनको सब चिन्ताओं से मुक्त किया। (६३)

वन्दौं कौशलपुर दिशि प्राची। कीरति जासु सकल जग माची।।
प्रगटेउ जहँ रघुपति शशि चारु। विश्व सुखद खल कमल तुसारु।।

दशरथ राउ सहित सब रानी। सुकृत सुमंगल मूरति मानी।।
करहूं प्रणाम कर्म मन बाणी। करहु कृपा सुत सेवक जानी।।

मैं कौशलपुर की वन्दना करता हूँ जिसकी कीर्ति सारे जगत् में फैली हुई है। जहाँ राम जैसे सुन्दर चंद्रमा प्रकट हुये और दुष्ट ओस भी कमल पर गिरकर जहाँ शोभा पाती है। सब रानियों सहित राजा दशरथ जी को पुण्य और कल्याण की मूर्ति मानकर मन-वचन और कर्म से प्रणाम करता हूँ। वे अपने पुत्र को सेवक जान कृपा करें। (६४)

जनहिं विरचि बड़भयो विधाता।
महिमा अवधि राम पितु माता।।

वन्दौं अवध भुआल, सत्य प्रेम जेहि राम पद।
विछुरत दीन दयालु, प्रिय तनु तृन इव परिहरेऊ।।

अवध में राम के माता-पिता की बड़ी महिमा है जिनको रचकर विधाता ने बड़ाई पाई। मैं अवधपुरी के राजा दशरथ की वन्दना करता हूँ

जिनका राम के चरणों में सच्चा प्रेम था जिसने प्रभु के बिछुड़ते ही अपने प्यारे शरीर को तिनके के समान त्याग दिया। (६५)

प्रणवऊं परिजन सहित विदेहू। जाहि रामपद गूढ़ सनेहू।।
योग भोग महं राखेउ गोई। राम विलोकत प्रगटेउ सोई।।

प्रणवऊं प्रथम भरत के चरणा। जासु नेमव्रत जाइ न वरणा।।
राम चरण पंकज मन जासू। लुब्ध मधुप इव तजई न पासू।।

परिवार सहित राजा जनक को मैं प्रणाम करता हूँ जिन्होंने राम के गूढ़ प्रेम को योग के रूप में छिपा रखा था किन्तु राम को देखते ही प्रकट हो गया। भाइयों में प्रथम, भरत के चरणों में प्रणाम करता हूँ जिनका नेम-व्रत अकथनीय है तथा जिनका मन राम के चरणों में भँवरे की भाँति लुभायमान था, कभी उनका साथ नहीं छोड़ता। (६६)

वन्दौं लक्ष्मण पद जलजाता। सीतल शुभग भक्त सुख दाता।।
रघुपति कीरति विमल पताका। दंड समान भयऊ यश जाका।।

शेष सहस्र शीश जग कारण। जो अवतरेउ भूमि भय टारन।।
सदा सो सानुकूल रह मोपर। कृपासिंधु सौमित्र गुणाकर।।

मैं श्री लक्ष्मण जी के चरण कमलों को प्रणाम करता हूँ जो शीतल, सुन्दर और भक्तों को सुख देने वाले हैं। प्रभु की कीर्ति रूपी विमल पताका के ऊँचा करने में जिनका यश दण्डे के समान है। जो सहस्रों सिर पर पृथ्वी को धारण करने वाले शेष जी के अवतार हैं, पृथ्वी के भय को दूर करने के लिए जो प्रकट हुये वे गुणों की खान कृपा के समुद्र सुमित्रानन्दन श्री लक्ष्मण जी मुझ पर प्रसन्न रहें। (६७)

रिपुसूदन पद कमल नमामी। सूर सुशील भरत अनुगामी।।
महाबीर विनवउं हनुमाना। राम जासु यश आपु बखाना।।

प्रनवउं पवन कुमार, खल बन पावक ज्ञान धन।
जासु हृदय आगार, बसहिं राम सर चाप धर।।

मैं शत्रुध्न जी के चरणों में प्रणाम करता हूँ जो बड़े वीर, सुशील और भरत जी के साथी थे। मैं महावीर हनुमान जी की विनती करता हूँ जो दुष्टरूपी वन को भस्म करने में अग्नि के समान और बुझाने में ज्ञान रूपी बादलों के समान हैं। जिनके यश का वर्णन राम ने स्वयं किया है जिनके हृदय रूपी भवन में धनुष बाण धारण किये श्री राम जी निवास करते हैं। (६८)

कपिपति रीछ निशाचर राजा। अंगदादि जे कीस समाजा।।
वन्दौं सब के चरण सुहाए। अधम शरीर राम जिन पाए।।

रघुपति चरण उपासक जेते। खग मृग सुर नर असुर समेते।।
वन्दौं पद सरोज सब केरे। जे बिनु काज राम के चेरे।।

वानरराज सुग्रीव, रीछराज जामवंत और राक्षसराज विभीषण तथा अंगदादि जितने भी वानरों का समाज हैं सबके सुन्दर चरणों की मैं वन्दना करता हूँ। जिन्होंने नाशवान अधम शरीर में राम को पा लिया। भगवान राम के चरणों के जितने भी उपासक हैं पशु, पक्षी, देवता, मनुष्य, राक्षस आदि मैं उन सबको प्रणाम करता हूँ जो श्री राम के निष्काम सेवक हैं। (६९)

सुक सनकादि भक्त मुनि नारद। जे मुनिवर विज्ञान विशारद।।
प्रनवउं सबहिं धरनि धरि शीशा। करहु कृपा जन जानि मुनीशा।।

जनक सुता जग जननी जानकी। अतिशय प्रिय करुणा निधान की।।
ताके युगपद कमल मनाऊं। जासु कृपा निर्मल मति पाऊं।।

श्री शुकदेव जी, सनकादिक चारों संत और भक्त तथा जितने भी नारद आदि मुनियों में श्रेष्ठ विज्ञान में निपुण हैं मैं उन सबके चरणों में पृथ्वी पर सिर टेककर प्रणाम करता हूँ। हे मुनिश्वरो! आप सब मुझको अपना दास जान कर कृपा कीजिये। राजा जनक की पुत्री, जगत् की माता

और राम की अत्यन्त प्यारी श्री जानकी जी के दोनों चरण कमलों को मनाता हूँ, जिनकी कृपा से निर्मल बुद्धि पाऊँ। (७०)

पुनि मन बचन कर्म रघुनायक। चरण कमल वन्दौं सब लायक।।
राजिव नयन धरें धनु सायक। भक्त विपत्ति भंजन सुख दायक।।

गिरा अर्थ जल वीचि सम, कहिअत भिन्न न भिन्न।
वन्दौं सीताराम पद, जिन्हहिं परम प्रिय खिन्न।।

मन-वचन और कर्म से कमलनयन, धनुषधारी भक्तों की विपत्ति का नाश करके सुख देने वाले रघुनाथ जी के सर्व समर्थ चरण कमलों की वन्दना करता हूँ। जो वाणी और वाणी का अर्थ, जल और जल की लहर के समान कहने में अलग हैं पर वास्तव में अलग हैं नहीं। जिन्हें दीन और दुःखी बहुत प्यारे हैं। मैं उन सीता और श्री रामचन्द्र जी के चरणों की वन्दना करता हूँ। (७१)

नाम वंदना

वन्दौं नाम राम रघुवर को। हेतु कृपानु भानु हिमकर को।।
विधि हरि हर मय वेद प्राण सो। अगुन अनूपम गुण निधान सो।।

महामंत्र जेहि जपत महेशू। काशी मुक्ति हेतु उपदेशू।।
महिमा जासु जानि गणराऊ। प्रथम पूजियत नाम प्रभाऊ।।

मैं राम के अथवा रघुवर के नाम की वन्दना करता हूँ जो प्राणों सहित अग्नि, सूर्य और चन्द्रमा का हेतु तथा ब्रह्मा, विष्णु, शिव का ज्ञान है। वह सत, रज, तम इन तीनों गुणों से परे और तीनों गुणों का स्वामी एवं उपमा रहित है। जिस महामन्त्र को शिव जी स्वयं जपते हैं और काशी में मुक्ति के लिए उपदेश करते हैं। जिसकी महिमा को जान गणेश जी देवताओं में प्रथम पूजनीय हुए यह उस नाम का ही प्रभाव है। (७२)

जानि आदि कवि नाम प्रतापू। भयऊ सिद्ध करि उलटा जापू।।
सहस नाम सम सुनि शिवबानी। जपि जेहि पिय संग भवानी।।

हरषे हेतु हेरि हर हिय को। किय भूषण तिय भूषण ती को।।
नाम प्रभाव जान शिव नीको। कालकूट फलु दीन्ह अमीको।।

जिस नाम को जानकर बाल्मीकि उलटा जपकर सिद्ध हो गये, उस नाम की महिमा शिव जी से हजारों नामों के बराबर सुनकर पार्वती जी शिव जी के साथ जपती हैं। उस नाम के प्रेम सहित जपने से पार्वती जी का प्रेम देखकर शिव जी जो स्वयं पार्वती जी के भूषण थे, पार्वती जी को अपना भूषण बनाया। नाम के प्रभाव को शिव जी भलीभाँति जानते हैं, शिव जी ने विष पिया किन्तु नाम के प्रभाव से विष ने अमृत का फल दिया। (७३)

वर्षा रितु रघुपति भक्ति, तुलसी सालि सुदास।
राम नाम वर वरण युग, श्रावण भादौं मास।।

आखर मधुर मनोहर दोऊ। वर्ण विलोचन जन जिय जोऊ।।
सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू। लोक लाहु परलोक निवाहू।।

संत तुलसीदास जी कहते हैं कि उत्तम सेवक रूपी धन के लिए भक्ति वर्षा ऋतु के समान है जिस प्रकार वर्षाऋतु में सावन-भादो, दो महीने की जोड़ी है उसी प्रकार भक्ति के नाम में दो अक्षरों की जोड़ी है। वे दोनों अक्षर वाणी से उत्पन्न नहीं होते, वे मधुर और मनोहर तथा भक्तों के हृदय के नेत्र हैं। सुमिरन करने में सुलभ और सभी को सुखदायक तथा दोनों लोकों में लाभदायक हैं। (७४)

कहत सुनत सुमिरत सुठिनीके। राम लखन सम प्रिय तुलसी के।।
वरणत वर्ण प्रीति विलगाती। ब्रह्म जीव सम सहज संघाती।।

नर नारायन सरिस सुभ्राता। जग पालक विशेष जन त्राता।।
भक्ति सुतीय कल कर्ण विभूषण। जगहित हेतु बिमल विधु पूषण।।

वे दोनों अक्षर कहने, सुनने और स्मरण करने में बड़े सुन्दर हैं उनमें एक अक्षर राम के समान और दूसरा लक्ष्मण के समान तुलसीदास जी को प्यारे हैं। उन अक्षरों को कहने पर प्रीति टूट जाती है, वे जीव को ब्रह्म से मिलाने में साथी हैं। दोनों अक्षर नर और नारायण के समान सुन्दर भ्राता हैं। ये जगत् का पालन और भक्तों की विशेष रूप से रक्षा करने वाले हैं। ये भक्तिरूपी सुन्दर स्त्री के कानों के कर्ण फूल हैं और जगत् के लिए निर्मल चन्द्र और सूर्य के समान हैं। (७५)

स्वाद तोष सम सुगति सुधा के। कमठ शेष सम धर वसुधा के।।
जन मन मंजु कंज मधु कर से। जी यशोमति हरि हलधर से।।

एक छत्र एक मुकुट मणि, सब वर्णन पर जोऊ।
तुलसी रघुबर नाम के वर्ण विराजत दोऊ।।

वे दोनों अक्षर स्वाद में अमृत, सन्तोष में सद्गति और पृथ्वी को धारण करने में शेष तथा कश्यप के समान हैं। भक्तों के मन रूपी सुन्दर कमल में भौंरे के समान तथा जीवरूपी यशोदा के लिए कृष्ण और बलराम के समान हैं। तुलसीदास जी कहते हैं कि नाम के दो अक्षरों पर एक छत्र ाकार और दूसरा मुकुटमणि ँ कार विराजमान हैं। (७६)

समुझत सरिस नाम अरु नामी। प्रीति परसपर प्रभु अनुगामी।।
नाम रूप दोउ ईश उपाधी। अकथ अनादि सुसामुझि साधी।।
को बड़ छोट कहत अपराधू। सुनि गुण भेद समुझिहहिं साधु।।

समझने में नाम और नामी दोनों सरल हैं, दोनों की आपस में प्रीति है और दोनों ही प्रभु के साथी हैं। नाम और रूप तो दो उपाधि हैं। दोनों

ही अकथ और अनादि हैं। जो समझना चाहें साधना से ही अच्छी प्रकार समझ सकते हैं। इनमें कौन बड़ा और कौन छोटा है यह कहने में अपराध है परन्तु नाम के गुणों को और भेद को समझने वाले कोई साधु ही समझेंगे। (७७)

देखियहिं रूप नाम आधीना। रूप ज्ञान नहीं नाम विहीना।।
रूप विशेष नाम बिन जाने। करतल गत न परहिं पहिचाने।।
सुमिरिये सो नाम रूप बिनु देखे। आवत हृदय सनेह विशेषे।।

वे रूप को नाम को अधीन देखेंगे क्योंकि रूप का ज्ञान नाम के बिना नहीं होता। हाथ में रखी वस्तु भी नाम के जाने बिना पहचान नहीं सकते। यदि नाम का सुमिरन करोगे तो हृदय में विशेष प्रेम होने पर रूप भी ध्यान में आ जायेगा। (७८)

नाम रूप गति अकथ कहानी। समझत सुखद न परत बखानी।।
अगुण सगुण बिच नाम सुसाखी। उभय प्रबोधक चतुर दुभाषी।।

राम नाम मणि दीप धरु, जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहिरेउ, जो चाहसि उजियार।।

नाम और रूप की गति अकथ है यह समझने पर ही सुखदाई हैं कहने में नहीं आते। व्यक्त और अव्यक्त दोनों रूपों में नाम साक्षी है और दोनों का बोध कराने वाला है। वह नाम दुभाषी अर्थात् निर्गुण और सगुण दोनों है। वह 'स' कार भी है और 'अ' कार से रहित निराकार भी है। तुलसीदास जी कहते हैं कि यदि तूं भीतर और बाहर उजाला चाहता है तो नामरूपी मणि के दीपक को प्राणों के दरवाजे की देहली में धारण कर। (७९)

नाम जीह जपि जागहिं योगी। विरति विरंचि प्रपंच वियोगी।।
ब्रह्म सुखहिं अनुभवहिं अनुपा। अकथ अनामय नाम न रुपा।।

नाम निरूपण नाम यतन तें। सो प्रगटत जिमि मोल रतन ते।।
जाना चहहिं गूढ़ गति जेऊ। नाम जीह जपि जानहिं तेऊ।।

संसाररूपी रात्रि की मोहरूपी निद्रा से योगीजन नाम को आत्मा द्वारा जपकर ही जागते हैं। नाम में विशेष प्रेम से अथवा नाम के ही विशेष योग से विधाता ने इस प्रपंचरूपी विश्व को रचा है। नाम ही ब्रह्म का सुख है, अनुभव में आने वाला और अनुपम है। नाम का निरूपण नाम ही है जो उसे जानना चाहें बड़े यतन से ही जान सकते हैं। जिस प्रकार जौहरी की संगत से रत्नों की कीमत जानी जाती है उसी प्रकार साधुओं की संगत से नामरूपी हीरे की पहचान होती है। जो नाम की गूढ़गति को जानना चाहें वे नाम को हृदय में अपनी आत्मा द्वारा जपकर ही जान सकते हैं। (८०)

राम भक्त जग चारि प्रकारा। सुकृति चारिउं अनघ उदारा।।
चहुं चतुरन्ह कहं नाम अधारा। ज्ञानी प्रभुहिं विशेष पियारा।।
साधक नाम जपहिं लव लाए। होहिं सिद्ध अनिमादिक पाए।।

राम के भक्त जगत् में ''चार प्रकार'' के हैं और चारों को ही राम का आधार है। आर्त्त, अर्थार्थी, जिज्ञासु और ज्ञानी, ये चारों उत्तम कर्म करने वाले पाप से रहित और उदार-चित्त हैं किन्तु ज्ञानी भक्त प्रभु को विशेष प्यारा है। जो साधक हैं वे नाम को लव लगाकर जपते हैं और नाम के प्रभाव से अनिमादिक सिद्धियाँ पाकर सिद्ध हो जाते हैं। (८१)

सकल कामना हीन जे, राम भक्ति रस लीन।
नाम सप्रेम पीयूष हृदय, तिनहुँ किये मन मीन।।

अगुन सगुन दोऊ ब्रह्म स्वरूपा। अकथ अगाध अनादि अनूपा।।
मोरे मत बड़ नाम दुहुंते। किये जेहि युग निज बस बूते।।

जो रिद्धि-सिद्ध आदि सभी कामनाओं से रहित होकर भक्ति रस में लीन हैं, जिन्होंने अपने हृदय में नाम के प्रेम रूपी रस में मन को मछली

की भाँति लीन किया हुआ है वे ज्ञानी भक्त हैं। ब्रह्म के दो रूप हैं निर्गुण जो सर्वव्यापक है परन्तु अपने गुण अर्थात् शक्ति के बिना कुछ नहीं करता। सगुण जो देह धारण कर अपनी शक्ति को अधीन करके भक्तों के लिए सब कुछ करता है। उन दोनों में मेरे मत से नाम बड़ा है जिसने अपने बूते पर दोनों को अपने वश किया है क्योंकि नाम के बिना हृदय में न निर्गुण है और न सगुण। (८२)

प्रौढ़ि सुजन जन जानहिं जनकी। कहहुं प्रतीति प्रीति रुचि मनकी।।
एक दारुगति देखिए एकू। पावक सम युग ब्रह्म विवेकू।।
उभय अगम युग सुगम नाम ते। कहेउं नाम बड़ ब्रह्म राम ते।।

मैं अपने विश्वास, मन के प्रेम और अपनी रुचि के अनुसार कहता हूँ, बूढ़े संतजन ही इस दास के मन की जानते हैं। जिस प्रकार एक अग्नि काष्ठ के अन्दर है और एक प्रकट है इसी प्रकार वह ब्रह्म व्यापक भी है और प्रकट भी है किन्तु जब तक अग्नि प्रकट न हो काम नहीं आती। इसी प्रकार ब्रह्म का विचार है। प्रभु के दोनों रूप अगम अर्थात् जानने में कठिन हैं परन्तु नाम से दोनों सुगम हैं इसलिए मैंने नाम को ब्रह्म और राम से बड़ा कहा है। (८३)

व्यापक एक ब्रह्म अविनाशी। सत चेतन घन आनंद राशी।।
अस प्रभु हृदय अछत अविकारी। सकल जीव जग दीन दुखारी।।
जपहिं नाम जन आरत भारी। मिटहिं कुशंकट होहिं सुखारी।।

निर्गुण तें यहि भाँति बड़, नाम प्रभाव अपार।
कहहुँ नाम बड़ राम ते, निज विचार अनुसार।।

एक ही ब्रह्म सर्वव्यापक, अविनाशी, सत्, चेतन तथा आनंद का स्वरूप है, ऐसा प्रभु सभी जीवों के हृदय में विराजमान है और मल से, विकारों से रहित है परन्तु फिर भी सब जीव दीन और दुःखी हैं, वह सर्व व्यापक ब्रह्म किसी के दुःखों को दूर नहीं करता परन्तु अत्यन्त दुःखी भी उस नाम को जपता है तो उसके सभी बुरे से बुरे संकट मिट जाते

हैं और वह सुखी हो जाता है। इस प्रकार वह ज्योति स्वरूप ब्रह्म से नाम का प्रभाव अत्यन्त बड़ा है। अब मैं अपने विचार से देहधारी राम से नाम किस प्रकार बड़ा है, कहता हूँ। (८४)

राम भक्त हित नर तनु धारी। सहि संकट किये साधु सुखारी।।
नाम सप्रेम जपत अनयासा। भक्त होहिं मुद मंगल बासा।।
राम एक तापस तिय तारी। नाम कोटि खल कुमति सुधारी।।

राम ने भक्तों के हित के लिए मनुष्य शरीर धारण करके स्वयं कष्ट सहन कर साधुओं को सुखी किया परन्तु भक्तजन प्रेम के साथ नाम का जप करते हुए सहज ही में आनन्द और मंगल में वास करते हैं। राम ने एक गौतम ऋषि की पत्नी-अहिल्या को तारा और नाम ने कलियुग में करोड़ों दुष्टों की दुर्मतियों को सुधारा। (८५)

ऋषि हित राम सुकेतु सुता की। सहित सेन सुत कीन्ह विवाकी।।
सहित दोष दुःख दास दुरासा। दलइ नाम जिमि रवि निशि नाशा ।।
भंजेउ राम आपु भव चापू। भव भय भंजन नाम प्रतापू।।

राम ने विश्वामित्र के लिए सुकेतु की पुत्री ताड़िका और उसके पुत्र सुबाहु को सेना सहित समाप्त किया। परन्तु नाम भक्तों के दोष, दुःख और दुराशाओं को इस तरह नष्ट करता है। जिस प्रकार सूर्य रात्रि को नष्ट करता है। राम ने स्वयं भौतिक धनुष को तोड़ा किन्तु नाम के प्रताप से सारे संसार का भय नष्ट हो जाता है। (८६)

दण्डक वन प्रभु कीन्ह सुहावन। जन मन अमित नाम किये पावन।।
निशिचर निकर दले रघुनन्दन। नाम सकल कलिकलुष निकन्दन।।

सबरी गीध सुसेवकन, सुगति दीन्ह रघुनाथ।
नाम उधारे अमित खल, वेद विदित गुण गाथ।।

राम ने दण्डक वन को सुहावना किया और नाम ने अनेकों भक्तों के हृदय पवित्र किए। राम ने त्रेता में प्रगट होकर अनेकों

निशाचरों का संहार किया किन्तु नाम ने कलियुग में प्रकट होकर करोड़ों मनुष्यों के अवगुण और अज्ञान को नष्ट कर दिया। राम ने सबरी-भिलनी, गीधराज-जटायु तथा उत्तम सेवकों को ही सद्गति दी परन्तु नाम ने अनेकों दुष्टों का उद्धार किया, नाम के गुणों की गाथा वेद में विदित है। (८७)

राम सुकंठ विभिषण दोऊ। राखे सरन जान सब कोऊ।।
नाम अनेक गरीब निवाजे। लोक वेद बर बिरद विराजे।।

राम भालु कपि कटकु बटोरा। सेतु हेतु श्रम कीन्ह न थोरा।।
नाम लेत भव सिन्धु सुखाहीं। करहु विचार सुजन मन माहीं।।

यह सभी जानते हैं कि राम ने विभीषण और सुग्रीव दोनों को शरण दी किन्तु नाम ने अनेकों गरीबों पर दया करके उन्हें अपनी शरण में रखा जिसका यश वेद में वर्णन है और लोक में विद्यमान है। राम ने पुल बाँधने के लिए थोड़ा परिश्रम नहीं किया बहुत से भालू वानरों का दल एकत्र किया किन्तु नाम के लेने मात्र से जीव भवसागर से ही पार हो जाते हैं। सन्तजन इस पर विचार करें। (८८)

राम सकल रण रावण मारा। सीय सहित निजपुर पग धारा।।
राजा राम अवध रजधानी। गावत गुण सुर मुनिवर बाणी।।

सेवक सुमिरत नाम सप्रीती। बिनु श्रम प्रबल मोह दल जीती।।
फिरत सनेह मगन सुख अपने। नाम प्रसाद सोच नहिं सपने।।

रावण को मारकर राम सीता सहित अयोध्या में पधारे राम-राज्य और राजधानी अयोध्या के गुण देवता और ऋृषि-मुनि गाते हैं किन्तु सेवक बिना ही परिश्रम के प्रेम से नाम का सुमिरन करके बड़े

भयंकर मोह को जीत लेता है। सेवक नाम के प्रेम में मगन रहकर अपने सुख तथा नाम की कृपा से भ्रमण करता है जिसे स्वप्न में भी चिन्ता नहीं। (८९)

ब्रह्म रामते नाम बड़, वर दायक बर दान।
राम चरित सतकोटि महं, लिय महेश जिय जान।।

नाम प्रसाद शंभु अविनाशी। साजु अमंगल मंगल राशी।।
सुक सनकादि सिद्ध मुनि योगी। नाम प्रसाद ब्रह्म सुख भोगी।।

इस प्रकार ब्रह्म और राम से नाम बड़ा है जिस नाम को सौ करोड़ नामों में भगवान शंकर जी ने अपने हृदय में जाना। जितने भी वर देने वाले हैं सब नाम के ही प्रसाद से वर देते हैं। नाम के प्रभाव से शिव जी के धारण किए अमंगल साज भी सब मंगलमय हो गये। श्री शुकदेव मुनि संत सनक, संतकुमार, संत सनन्दन, संत सुजात तथा सिद्ध मुनि और योगी इन सभी ने नाम के प्रसाद से ही ब्रह्म सुख भोगा है। (९०)

नारद जानेउ नाम प्रतापू। जग प्रिय हरि हरिहर प्रिय आपू।।
नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू। भक्त शिरोमणि भए प्रहलादू।।

ध्रुव सगलानि उपेउ हरिनामू। पायउ अचल अनूपम ठामू।।
सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने वश करि राखेउ रामू।।

महामुनि नादर जी ने नाम के प्रताप को अच्छी प्रकार जाना जिससे वे जगत प्रिय भगवान विष्णु और शिव जी के प्यारे बन गये। नाम के जपने से भक्त शिरोमणि, प्रह्लाद के ऊपर प्रभु ने कृपा की और ध्रुव ने भी उसी नाम को उत्तम लगन से जपा जिससे अनुपम और अचल धाम पाया। श्री हनुमान जी ने भी उसी पावन नाम का सुमिरन करके राम को अपने वश में किया। (९१)

अपितु अजामिल गज गणिकाऊ। भए मुक्त हरि नाम प्रभाऊ।
कहौं कहां लगि नाम बड़ाई। राम न सकेउ नाम गुण गाई।।
चहुं युग चहुं श्रुति नाम प्रभाऊ। कलि विशेष नहिं आन उपाऊ।।

नाम राम को कल्प तरु, कलि कल्याण निवास।
जेहि सुमिरत भए भागते, "तुलसी" तुलसीदास।।

और भी अजामिल, गज और गणकादि जितने भी भक्त हुए हैं सब नाम के ही प्रभाव से मुक्त हुए हैं। मैं नाम की बड़ाई कहाँ तक कहूँ! जबकि राम भी नाम के गुणों को न गा सके। चारों युगों में, चारों वेदों में नाम का ही प्रभाव है, वह बीज रूप से सभी के हृदय में व्यापक है परन्तु कलियुग में विशेष रूप से प्रगट है जिसके बिना कोई दूसरा उपाय भी नहीं है। नाम कलियुग में कल्पवृक्ष की भाँति इच्छानुसार फल देने वाला जीवों के कल्याण के लिए मनुष्य रूप में निवास करेगा। जिस नाम का सुमिरन तथा स्मरण करने पर तुलसी भाग्यवश तुलसीदास हो गये। (६२)

चहुंयुग तिहुं काल तिहुं लोका। भय नाम जपि जीव विशोका।।
वेद पुराण संत मत एहू। सकल सुकृत फल नाम सनेहू।।

भूत, भविष्य, वर्तमान, इन तीनों कालों में, नरक, स्वर्ग, अपवर्ग इन तीनों लोकों में और चारों युगों में नाम जपकर ही जीव शोक से मुक्त हुए हैं। वेद पुराण और सभी सन्तों का यही मत है कि नाम में प्रेम का होना ही सब शुभ कर्मों का फल है। (६३)

ध्यान प्रथम युग मख विधि दूजे। द्वापर परितोषत प्रभु पूजे।।
कलि केवल मल मूल मलीना। पाप पयोनिधि जन मन मीना।।
नाम काम-तरु काल कराला। सुमिरत समन सकल जग जाला।।

प्रथम सतयुग में ध्यान से, त्रेतायुग में योगयज्ञ अर्थात् नाम के साधन से तथा द्वापरयुग में प्रभु की पूजा से भक्तजन संतुष्ट होते हैं परन्तु कलियुग के भक्त मलीन स्वभाव के हैं जिनका मन अवगुणों के मूल पापरूपी समुद्र में मछली की भाँति गोता लगाता रहता है। ऐसे विकराल कलिकाल में नाम कल्पवृक्ष की भाँति मनुष्य रूप में प्रकट होता है जिसके नाम का स्मरण करने से जगत् के सारे जंजाल नष्ट हो जाते हैं। (९४)

राम नाम कलि अभिमत दाता। हित परलोक लोक पितु माता।।
नहिं कलि कर्म न भक्ति विवेकू। राम नाम अवलम्बन एकू।।
भाव कुभाव अनख आलसहूं। नाम जपत मंगल दिशि दशहूं।।

वह नाम कलियुग के जीवों के लिए बड़ा दयालु और सबका प्राणदाता है वह परलोक का हित करने वाला और इस लोक का माता-पिता है। कलियुग के भक्तों को कर्म का और भक्ति का विवेक नहीं है, केवल एक नाम का ही आधार है। कलियुग के भक्त नाम को भाव से जपें या कुभाव से अथवा आलस्य से जैसे भी जपें उनके लिए दसों दिशा में मंगल है। (९५)

कालनेमि कलि कपट निधानू। नाम सुमति समरथ हनुमानू।।
राम नाम नरकेशरी, कनककसिपु कलिकाल।
जापक जन प्रह्लाद जिमि, पालहिं सुर दलि शाल।।

कलियुग के साधु कालनेमि के समान छलकपट में निधान हैं, परन्तु उनके कपट को नष्ट करने के लिए उत्तम बुद्धि हुनमान की भाँति नाम समरथ है। नरसिंह रूपी नाम हिरण्यकशिपु रूपी कलियुग को नष्ट करने के लिए प्रकट होगा और जापक जन प्रह्लाद जैसे होंगे जो दुष्टों का नाश करके सन्त अथवा भक्तजनों की रक्षा करेंगे। (९६)

तुलसी विनय

सुमिर सो नाम रामगुण गाथा। करहुं नाय रघुनाथहिं माथा।।
मोरि सुधारहिं सो सब भाँती। जासु कृपा नहिं कृपा अघाती।।
राम सुस्वामि कुसेवक मोसो। निज दिशि देखि दयानिधि पोसो।।

नाम का स्मरण करके नाम के गुणों की गाथा का वर्णन राम को सिर नवाकर करता हूँ। वे प्रभु मेरी सभी तरह से सुधार लेंगे। जिसकी कृपा, कृपा करने से नहीं अघाती। दीनदयालु कृपालु परमेश्वर तो मेरे स्वामी और मुझ जैसा नीच सेवक यह जोड़ा मिलता तो नहीं था परन्तु उस दयालु परमेश्वर ने अपनी ओर देखकर मेरा पालन पोषण किया है। (९७)

लोकहुं वेद सुसाहिब रीती। विनय सुनत पहिचानत प्रीती।।
गनि गरीब ग्राम नर नागर। पण्डित-मूढ़ मलीन उजागर।।
सुकवि कुकवि निजमति अनुसारी। नृपहिं सराहत सब नर नारी।।

लोक और वेद में भी अच्छे स्वामी की यही रीति है कि वह विनय सुनते ही सेवक के प्रेम को पहिचान लेते हैं। अमीर-गरीब ग्रामवासी या नगर वासी, पण्डित या मूर्ख, बदनाम और यशस्वी, ऐसे ही कुकवि और सुकवि सभी नर-नारी अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार अपने राजा की सराहना करते हैं। (९८)

साधु सुजान शुशील नृपाला। ईश अंश भव परम कृपाला।।
सुनि सन्मानहिं सबहिं सुबानी। भनिति भक्ति नतिगतिपहिचानी।।

यह प्राकृत महिपाल स्वभाऊ। जान शिरोमणि कौशल राऊ।।
रीझत राम सनेह निसोतें। को जग मंद मलीन मति मोतें।।

इसी प्रकार यह सुनकर कि परमपिता परमेश्वर के अंश से कृपासिन्धु भगवान प्रकट हुए हैं तथा कृपालु प्रभु के प्रवचन-सत्संग, भक्ति

और व्यवहारों से उन्हें पहिचान कर संत-महात्मा-साधु, उत्तम भक्त, जो शील स्वभाव के सज्जन तथा उत्तम वाणी से सम्मान करेंगे। श्री शिव जी का तो यह प्राकृतिक स्वभाव ही है कि वे प्रभु को सर्व शिरोमणि जानकर उनके प्रेम में बड़े प्रसन्न रहते हैं। मुझ से अधिक ऐसा कौन मन्द मति होगा जो ऐसे प्रभु से प्यार न करे। (९९)

सठ सेवक की प्रीति रुचि, राखहिं राम कृपालु।
उपल किये जलयान जेहिं, सचिव सुभट कपि भालु।।

हौंहु कहावत सबु कहत, राम सहत उपहास।
साहिब सीता नाथसों, सेवक तुलसीदास।।

कृपालु प्रभु बड़े दयालु हैं वे मुझ दुष्ट सेवक की प्रीति और रुचि को अवश्य रखेंगे, जिन्होंने पत्थरों को भी जहाज बना दिया और भालु-वानरों को बुद्धिमान मंत्री बनाया। मैं प्रभु का सेवक हूँ यह सभी कहते हैं और मैं भी बिना लज्जा और संकोच के कहता हूँ कहाँ तो श्री-पति और कहाँ ये तुलसीदास जैसा सेवक परन्तु इस बदनामी को कृपालु सहन करते हैं। (१००)

अति बड़ी मोरि ढिठाइ खोरी। सुनि अघ नरकहुँ नाक सिकोरी।।
समुझि सहम मोहिं अपडर अपने। सो सुधि राम कीन्ह नहिं स्वपने।।

सुनि अयलोकि सुचित चखचाही। भक्ति मोरि मति स्वामी सराही।।
कहत नसाय होय हिय नीकी। रीझत राम जानि जन जी की।।

यह मेरी बहुत बड़ी ढिठाई और गलती है, मेरे इस पाप को सुनकर नरक ने भी नाक सिकोड़ ली, वहाँ भी मेरे लिए जगह नहीं है। यह समझकर मैं अपने आप ही डर रहा हूँ। किन्तु मेरे दयालु प्रभु ने तो स्वप्न में भी इस बात पर ध्यान नहीं दिया। मेरे कृपालु प्रभु तो इस बात

को सुनकर, देखकर अपने उत्तम चित्त में धारण कर तथा भली-भाँति निरीक्षण कर मेरी भक्ति और बुद्धि की सराहना ही करते हैं। अपने अवगुण कहने से नष्ट होते हैं, भगवान तो केवल हृदय के प्रेम को जानकर ही रीझते हैं। (१०१)

रहति न प्रभु चित चूक किये की। करत सुरति सय बार हिय की।।
जेहि अघ बधेउ ब्याध जिमि बाली। फिरि सुकंठ सोई कीन्ह कुचाली।।

सोई करतूति विभिषण केरी। सपनेहूँ सो न नाथ हिय हेरी।।
ते भरतहिं भेंटत सनमाने। राज सभा रघुबीर बखाने।।

प्रभु के हृदय में अपने भक्तों की भूल-चूक याद नहीं रहती किन्तु सैकड़ों बार उनकी अच्छाई को याद करते हैं। जिस पाप के कारण बाली को व्याध की भाँति मारा वही पाप सुग्रीव ने भी किया और फिर वही करनी विभीषण की भी थी परन्तु राम ने स्वप्न में भी विचार नहीं किया। उसी विभीषण का भरत जी से मिलने के समय सम्मान किया और राजसभा में उनके गुणों का बखान किया। (१०२)

एहि बिधि निजगुण दोष कहि, सबहिं बहुरि शिर नाय।।
बरनउं रघुबर विमल यश, सुनि कलि कलुष नसाय।।

याज्ञबलिक जो कथा सुहाई। भारद्वाज मुनिवरहिं सुनाई।।
कहिहउं सोई संबाद बखानी। सुनहु सकल सज्जन सुख मानी।।

इस प्रकार अपने गुण-दोषों को कहकर और सबको सिर नवाकर मैं प्रभु का निर्मल यश वर्णन करता हूँ। जिसके सुनने से कलियुग के पाप नष्ट होते हैं। मुंनि याज्ञवल्क्य जी ने जो सुहानी कथा मुनि-श्रेष्ठ भारद्वाज जी को सुनाई थी उसी सम्वाद को मैं व्याख्या सहित कहूँगा। सभी सज्जन सुख का अनुभव करके सुनें। (१०३)

शम्भु कीन्ह यह चरित सुहावा। बहुरि कृपा करि उमहिं सुनावा।।
सोइ शिव काकभुसुण्डिहि दीन्हा। राम भक्त अधिकारी चीन्हा।।

तेहिसन याज्ञवल्क्य पुनि पावा। तिन्ह पुनि भारद्वाज प्रति गावा।।
ते श्रोता वक्ता सम शीला। समदर्शी जानहिं हरि लीला।।

शिव जी ने पहले इस सुहावने चरित्र को पार्वती जी को सुनाया और वही फिर काकभुशुण्डि जी को अधिकारी और राम-भक्त जानकर दिया। फिर काकभुशुण्डि जी से याज्ञवल्क्य जी ने पाया और भारद्वाज मुनि को सुनाया। वे दोनों श्रोता और वक्ता समान शील स्वभाव वाले, समदर्शी और प्रभु की लीलाओं को जानते हैं। (१०४)

जानहिं तीन काल निज ग्याना। करतल गत आमलक समाना।।
औरउ जे हरि भक्त सुजाना। कहहिं सुनहिं समुझहिं विधि नाना।।

मैं पुनि निज गुरु सन सुनी, कथा सो सूकर खेत।
समुझि नहीं तसि बालपन, तब अति रहेऊं अचेत।।

वे अपने ज्ञान से तीनों कालों की जानते हैं केवल पढ़-सुनकर ही नहीं व्यवहारिक रूप से हाथ में रखे आँवले के समान और भी जो उत्तम ज्ञान के जानने वाले भक्तजन हैं वे नाना प्रकार से इस कथा को कहते, सुनते और समझते हैं। वही कथा मैंने अपने गुरु जी से वाराह क्षेत्र में सुनी परन्तु उस समय बचपन के कारण मैं बेसमझा था इसलिए इस कथा के रहस्य को नहीं समझ सका था। (१०५)

तदपि कही गुरु बारहिंबारा। समुझि परी कछु मति अनुसारा।।
भाषा बद्ध करब मैं सोई। मोरे मन प्रबोध जेहिं होई।।

जस कछु बुद्धि विवेक बल मेरे। तस कहिहउं हिय हरिके प्रेरे।।
निज सन्देह मोह भ्रम हरणी। करउं कथा भव सागर तरणी।।

जब गुरु जी ने बार-बार कथा कही तब बुद्धि के अनुसार कुछ समझ में आई, वही मैं अपनी भाषा में लिखता हूँ जिससे मेरे मन को

बोध हो। जैसा भी विवेक और बुद्धि का बल है मैं हृदय में हरि की प्रेरणा से उसी के अनुसार कहूँगा। मैं अपने सन्देह-मोह-भ्रम को हरने के लिए अज्ञान को हरने वाली कथा रचता हूँ। जो संसाररूपी नदी से पार होने के लिए नाव है। (१०६)

बुध विश्राम सकल जन रंजनि। राम कथा कलि कलुष विभंनि।।
राम कथा कलि पन्नग भरनी। पुनि विवेक पावक कहं अरनी।।

राम कथा कलि कामद गाई। सुजन सजीवन मूरि सुहाई।।
सोइ बसुधातल सुधा तरंगिनि। भय भंजनि भ्रम भेष भुअंगिनि।।

राम कथा बुद्धिमान ज्ञानियों को विश्राम देने वाली, सब भक्तों को प्रसन्न करने वाली तथा कलियुग के पापों का नाश करने वाली है। यह कलियुगरूपी साँपों को मारने के लिए मोरनी और विवेक रूपी अग्नि को प्रकट करने के लिए अरनी है। यह कलियुग में सब मनोरथों को पूर्ण करने के लिए कामधेनु के समान और सज्जनों के लिए सुन्दर संजीवनी बूटी है। पृथ्वी पर यही अमृत की नदी है और जन्म-मरण के भय का नाश करने के लिए तथा भ्रम रूपी मेढकों को खाने के लिए यह सर्पिनि है। (१०७)

असुर सेन सम नरक निकन्दनी। साधु विबुध कुल हित गिरि नन्दिनी।।
सन्त समाज पयोधि रमासी। विस्वभार भर अचल क्षमा सी।।

सिव प्रिय मेकल सैल सुतासी। सकल सिद्धि सुख सम्पति रासी।।
सदगुण सुरगण अंब अदिति सी। रघुबर भक्ति प्रेम परमिति सी।।

यह रामकथा असुरों की सेना को तथा नरक को नष्ट करने वाली और साधु समाजरूपी देव कुल का हित करने वाली पार्वती के समान है। सन्त समाज के लिए क्षीर-समुद्र के समान लक्ष्मी जैसी और सम्पूर्ण विश्व का भार उठाने में अचल पृथ्वी के समान है। यह नाम गुण की

कथा शिव जी को नरमदा और गिरजा के समान प्यारी तथा सकल सिद्धि, सुख संपत्ति की उत्पन्न करने वाली है। सद्गुणों और देवताओं को उत्पन्न और पालन पोषण करने में माता अदिति के समान है। यह राम भक्ति और प्रेम की सीमा जैसी है। (१०८)

रामकथा मंदाकिनी, चित्रकूट चितचारु।
तुलसी सुभग सनेह बन, सिय रघुबीर विहारु।।
राम चरित चिन्तामणि चारु, संत सुमति तिय सुभग सिंगारु।।

राम कथा मंदाकिनी नदी और चित्रकूट निर्मल चित्त है जिसमें तुलसीदास का सुन्दर स्नेह ही वन है और उस स्नेह रूपी वन में सीताराम विहार करते हैं। इस कथा में रामचरित सुन्दर चिन्तामणि है जो सन्तों की सद्बुद्धिरूपी स्त्री का सुन्दर श्रृंगार है। (१०९)

जय मंगल गुण ग्राम रामके। दानि मुक्ति धन धर्म धाम के।।
सद्गुरु ज्ञान विराग योग के। विबुध वैद्य भव भीम रोग के।।

जननी जनक सियराम प्रेमके। बीज सकल ब्रत धर्म नेम के।।
समन पाप संताप सोक के। प्रिय पालन परलोक लोक के।।

इस कथा में जिस नाम का वर्णन है वह मुक्ति के देने वाले ज्ञान, वैराग्य और योग के सद्गुरु हैं तथा संसार के भयंकर रोगों का नाश करने के लिए देवताओं के वैद्य अश्विनी कुमार के समान है। वह सीता-राम के प्रेम के माता-पिता के समान और सम्पूर्ण-व्रत, नेम, धर्म के बीज हैं। पाप, सन्ताप और शोक के हरने वाले लक्ष्मी-नारायण इस लोक और परलोक दोनों का प्रिय पालन करने वाले भगवान विष्णु हैं। (११०)

सचिव सुभट भूपति विचारके। कुंभज लोभ उदधि अपार के।।
काम कोह कलिमल करिगनके। केहरी सावक जन मन बन के।।

अतिथि पूज्य प्रियतम पुरारिके। कामद धन दारिद दवारिके।।
मंत्र महामणि विषय व्यालके। मेटत कठिन कुअंक भाल के।।

लक्ष्मीपति भगवान विष्णु विचार रूपी राजा के लिए बलवान-मंत्री के समान और लोभ रूपी अपार समुद्र को सोखने के लिए अगस्त्य मुनि के समान तथा काम, क्रोध एवं कलियुग के पाप रूपी हाथियों को मारने के लिए सिंह के समान हैं। भक्तों के हृदय में बसने वाले लक्ष्मीनारायण शिव जी के परमपूज्य और परम प्यारे अतिथि हैं वे प्यारे अतिथि-दरिद्रता रूपी अग्नि को बुझाने के लिए इच्छानुसार फल दाता और मेघ के समान हैं तथा विषय रूपी साँप का विष उतारने के लिए महामंत्र और चिन्तामणि के समान हैं। वे लक्ष्मी और विष्णु ललाट में लिखे कठिन से कठिन बुरे लेखों को भी मिटा देते हैं। (१११)

हरण मोह तम दिनकर करसे। सेवक सालि पाल जलधरसे।।
सकल सुकृत फल भूरि भोग से। जगहितु निरूपधि साधु लोग से।।
सेवक मन मानस मराल से। पावन गंग तरंग माल से।।

अज्ञानरूपी अन्धकार को हरण करने के लिए सूर्य और उसकी किरणों के समान तथा सेवकरूपी धान के लिए पानी और बादलों के समान हैं। वे सम्पूर्ण पुण्यों के फल स्वरूप महान् भोगों के समान एवं जगत् का हित करने के लिए साधु और सन्तों के समान हैं। ये सेवकों के मनरूपी मानसरोवर में रहने वाले हंस के समान तथा पवित्र करने में ज्ञान-गंगा और उसकी तरंगों के समान हैं। (११२)

कुपथ कुतर्क कुचालि कलि, कपट दम्भ पाखण्ड।
दहन राम गुण ग्राम जिमि, इन्धन अनल प्रचन्ड।।

राम चरित राकेश कर, सरिस सुखद सब काहु।
सज्जन कुमुद चकोर चित, हित विशेष बड़ लाहु।।

जिस प्रकार कुमार्ग, कुतर्क, कुचालि और कलियुग के कपट, दम्भ तथा पाखण्ड के जलाने के लिए रामगुण अग्नि और ईंधन के समान हैं उसी प्रकार लक्ष्मी-नारायण के सुन्दर चरित्र पूर्णिमा के चन्द्रमा की किरणों के समान सभी

को सुख देने वाले हैं। चकोर की भाँति सन्तों के चित्त के लिए ये विशेष हितकारी और लाभदायक हैं। (११३)

कीन्ह प्रश्न जेहि भांति भवानी। जेहि विधि शंकर कहा बखानी।।
सो सब हेतु कहब मैं गाई। कथा प्रसंग विचित्र बनाई।।

जेहिं यह कथा सुनी नहिं होई। जनि आश्चर्य करें सुनि सोई।।
कथा अलौकिक सुनहिं जे ज्ञानी। नहिं आश्चर्य करहिं उस जानी।।

श्री पार्वती जी ने भगवान शिव जी से जिस प्रकार प्रश्न किया और शिव जी ने विस्तार सहित उत्तर दिया वह सबके लिए विचित्र कथा-प्रसंग बनाकर, गाकर कहूँगा। जिसने यह कथा पहले न सुनी हो वह यह सुनकर आश्चर्य न करें, क्योंकि जो ज्ञानी जन इस कथा को सुनते हैं वे यह जानकर आश्चर्य नहीं करते कि (११४)

राम कथा कै मिति जग नाहीं। असि प्रतीति जिन्हके मन माहीं।।
नाना भांति राम अवतारा। रामायण सत कोटि अपारा।।

कल्प भेद हरि चरित सुहाये। भांति अनेक मुनीसन्ह गाये।।
करिय न संशय अस उर आनी। सुनिय कथा सादर रति मानी।।

संसार में राम कथा की कोई सीमा नहीं है। जिनको ऐसा विश्वास है कि राम के अवतार नाना भाँति से होते हैं और कल्प भेद के अनुसार वे भाँति-भाँति की लीला करते हैं। उन सब लीलाओं का वर्णन जिन सद्ग्रन्थों में है वह ऋषि-मुनियों ने भाँति-भाँति से गाये हैं। ''शास्त्रानुसार एक ब्रह्मा की सृष्टि उन्तीस करोड़ बीस लाख युगों की होती है और यह चौदहवाँ मनवंतर है इस प्रकार सौ करोड़ युगों में राम के अवतार भी सौ करोड़ हुए क्योंकि प्रति युग में राम का अवतार होता है।'' इसलिए ऐसा जानकर संदेह न कीजिये और आदर सहित प्रेम से इस कथा को सुनिये। (११५)

राम अनन्त गुण, अमित कथा विस्तार।
सुनि आश्चर्य न मानहिं, जिनके विमल विचार।

एहि विधि सब संशय करि दूरी। सिर धरि गुरुपद पंकज धूरी।।
पुनि सबहिं बिनवउं कर जोरी। करत कथा जेहिं लाग न खोरी।।

राम अनन्त है उसका अन्त नहीं है और न उसके गुणों का ही अन्त है तथा उसकी कथा के विस्तार की भी कोई सीमा नहीं है, इसलिए जिनके उत्तम-निर्मल विचार हैं वह सुनकर आश्चर्य नहीं करेंगे। इस प्रकार सब सन्देहों को दूर करके श्री सद्गुरुदेव कृपालु प्रभु के चरणों की रज सिर में धारण करके मैं पुनः हाथ जोड़कर सबकी विनती करता हूँ जिससे कथा की रचना में कोई दोष स्पर्श न करने पावे। (११६)